ख़ुतबात–3

नमाज़–रोज़ा की हक़ीक़त

सय्यद अबुल आला मौदूदी

नमाज़-रोज़ा की हक़ीक़त

(ख़ुतबात-3)

मौलाना सैयद अबुल आला मौदूदी (रह०)

अनुवादक

डॉ० कौसर यज़दानी नदवी

मर्कज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स

नई दिल्ली - 110025

KHUTBAT -III (हिन्दी)
इस्लामी साहित्य ट्रस्ट प्रकाशन न० –52

किताब का नामः खुतबात भाग–३

लेखकः मौलाना सय्यद अबुल आला मौदूदी

प्रकाशकः मर्कज़ी मक्तबा इस्लामी पब्लिशर्स
D-307, दावत नगर, अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव,
जामिया नगर, नई दिल्ली–110025
दूरभाष : 26971652, 26954341
फैक्स : 26947858
E-mail: mmipublishers@gmail.com
Website: www.mmipublishers.net

पृष्ठ	:	72
संस्करण	:	जनवरी 2011 ई०
संख्या	:	2100
मूल्य	:	**20.00**

मुद्रक : जे०के० आफसेट प्रिंटर्स, दिल्ली–6

विषय-सूची

भूमिका 4

इबादत 5

नमाज़ 13

नमाज़ में आप क्या पढ़ते हैं? 22

नमाज़ जमाअत के साथ 37

नमाज़ें बेअसर क्यों हो गईं? 48

रोज़ा 56

रोज़े का असल मक़सद 64

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

'अल्लाह के नाम से जो बड़ा कृपाशील, अत्यन्त दयावान है ।'

भूमिका

इस किताब में इस्लामी जगत् के एक बड़े आलिम मौलाना सैयद अबुल आला मौदूदी (रह०) के उन ख़ुतबों (भाषणों) को जमा करके प्रकाशित किया गया है, जो उन्होंने सन् 1938 ई० में दारुल इस्लाम पठानकोट (पंजाब) की जामा मस्जिद में कम पढ़े-लिखे आम मुसलमानों के सामने दिए थे । इन ख़ुतबों में इतने सादा और प्रभावकारी अन्दाज़ में इस्लाम की शिक्षाओं को उनकी रूह के साथ पेश किया गया है कि इन्हें सुनकर या पढ़कर बेशुमार लोगों की ज़िन्दगियाँ सुधर गईं और वे बुराइयों को छोड़ने और भलाइयों को अपनाने पर मजबूर हो गए । इन लोगों में मुसलमान भी हैं और ग़ैर मुसलिम भी ।

इन ख़ुतबों की इन्हीं ख़ूबियों की वजह से दुनिया की अनेक भाषाओं में इनके तर्जुमे बड़ी तादाद में प्रकाशित किए गए और वे सभी लोकप्रिय हुए ।

मौलाना मौदूदी की एक अन्य लोकप्रिय किताब दीनियात (इस्लाम धर्म) में इस्लामी अक़ीदों की तफ़सील बयान की गई है और इस्लाम के शरई निज़ाम (व्यावहारिक व्यवस्था) के बारे में भी कुछ जानकारी उपलब्ध कराई गई है और अब इस किताब में दीन की रूह (स्प्रिट) और इबादतें तफ़सील से बयान कर दी गई हैं । उक्त दोनों किताबों को मिलाकर पढ़ने के बाद दीन को समझना और दीन पर चलना भी आसान होगा और फिर दीन पर अमल करने के नतीजे में इंसान और इंसानी समाज में एक ख़ुशगवार तब्दीली देखने में आएगी और लोग दीन के फ़ायदों और बरकतों को अपनी आँखों से ख़ुद देख सकेंगे ।

जो लोग इन ख़ुतबों को जुमा में सुनाना चाहें वे पहले हर ख़ुतबे के शुरू में मसनून ख़ुतबा पढ़ें । दूसरा ख़ुतबा लाज़िमी तौर पर अरबी में दिया जाना चाहिए ।

यह बात भी बता देना ज़रूरी मालूम होता है कि ये ख़ुतबे जिन हालात में दिए गए थे वे अब बहुत कुछ बदल चुके हैं, इसलिए पढ़ते वक़्त उन हालात को नज़र में रखना चाहिए ।

इस्लामी साहित्य ट्रस्ट (रजि०) हिन्दी ज़ुबान में इस्लामी शिक्षाओं पर आधारित किताबें तैयार करने की सेवा में लगा हुआ है । इस किताब को आपकी सेवा में पेश करने का सौभाग्य हमें मिला इसपर हम अल्लाह का शुक्र अदा करते हैं ।

अल्लाह से दुआ है कि वह इस किताब को ज़्यादा से ज़्यादा मुफ़ीद बनाए ।

नसीम ग़ाज़ी फ़लाही
अध्यक्ष
इस्लामी साहित्य ट्रस्ट

इबादत

मुसलमान भाइयो! पिछले ख़ुतबे में मैने आपको दीन और शरीअत का मतलब समझाया था। आज मैं आपके सामने एक और लफ़्ज़ की तशरीह करूँगा जिसे मुसलमान आम तौर पर बोलते हैं, मगर बहुत कम आदमी इसका सही मतलब जानते हैं। यह 'इबादत' का लफ़्ज़ है।

अल्लाह तआला ने अपनी पाक किताब में बयान किया है—

وَمَا خَلَقْتُ الْجِنَّ وَالْإِنْسَ إِلَّا لِيَعْبُدُوْنِ○

यानी, मैंने जिन्न और इनसान को इसके सिवा और किसी ग़रज़ के लिए पैदा नहीं किया कि वे मेरी इबादत करें।

(क़ुरआन, 51:56)

इस आयत से मालूम हुआ कि आपकी पैदाइश और आपकी ज़िन्दगी का मक़सद अल्लाह की इबादत के सिवा और कुछ नहीं है। अब आप अन्दाज़ा कर सकते हैं कि इबादत का मतलब जानना आपके लिए कितना ज़रूरी है। अगर आप इसके सही मानी से नावाक़िफ़ होंगे तो मानो उस मक़सद ही को पूरा न कर सकेंगे, जिसके लिए आपको पैदा किया गया है और जो चीज़ अपने मक़सद को पूरा नहीं करती, वह नाकाम होती है। डॉक्टर अगर मरीज़ को अच्छा न कर सके तो कहते हैं कि वह इलाज में नाकाम हुआ। किसान अगर फ़सल पैदा न कर सके तो कहते हैं कि वह खेती में नाकाम हुआ। इसी प्रकार अगर आप अपनी ज़िन्दगी के असल मक़सद यानी 'इबादत' को पूरा न कर सके तो कहना चाहिए कि आपकी सारी ज़िन्दगी ही नाकाम हो गई। इसलिए मैं चाहता हूँ कि आप पूरे ध्यान से इबादत का मतलब सुनें और समझें और उसे अपने दिल में जगह दें, क्योंकि इसी पर आपकी ज़िन्दगी के कामयाब या नाकाम होने का दारोमदार है।

इबादत का मतलब

इबादत का लफ़्ज़ 'अब्द' से निकला है। अब्द के मानी बन्दे और ग़ुलाम

के हैं। इसलिए इबादत के मानी 'बन्दगी और ग़ुलामी' के हुए। जो शख़्स किसी का बन्दा हो, अगर वह उसकी ख़िदमत में बन्दा बनकर रहे और उसके साथ इस तरह पेश आए जिस तरह मालिक के साथ पेश आना चाहिए, तो यह बन्दगी और इबादत है। इसके ख़िलाफ़ जो शख़्स किसी का बन्दा हो और मालिक से तनख़्वाह भी पूरी-पूरी वुसूल करता हो मगर मालिक के सामने बन्दों की तरह काम न करे तो इसे नाफ़रमानी और सरकशी कहा जाता है। बल्कि ज़्यादा सही लफ़्ज़ों में इसे नमकहरामी कहते हैं।

अब ग़ौर कीजिए कि मालिक के मुक़ाबिले में बन्दों का-सा तरीक़ा इख़तियार करने की सूरत क्या है?

बन्दे का पहला काम यह है कि मालिक ही को मालिक समझे और यह ख़याल करे कि जो मेरा मालिक है, जो मुझे रोज़ी देता है, जो मेरी हिफ़ाज़त और निगहबानी करता है, उसी की वफ़ादारी मुझपर फ़र्ज़ है। उसके सिवा और कोई इसका हक़ नहीं रखता कि मैं उसकी वफ़ादारी करूँ।

बन्दे का दूसरा काम यह है कि हर वक़्त मालिक का कहा माने, उसके हुक्मों को पूरा करे, कभी उसकी ख़िदमत से मुँह न मोड़े और मालिक की मरज़ी के ख़िलाफ़ न ख़ुद अपने दिल से कोई बात करे, न किसी दूसरे शख़्स की बात माने। ग़ुलाम हर वक़्त, हर हाल में ग़ुलाम है। उसे यह कहने का हक़ ही नहीं कि मालिक की फ़लाँ बात मानूँगा और फ़लाँ बात न मानूँगा या इतनी देर के लिए मैं मालिक व आक़ा का ग़ुलाम हूँ और बाक़ी वक़्त में उसकी ग़ुलामी से आज़ाद हूँ।

बन्दे का तीसरा काम यह है कि मालिक का अदब और उसकी इज़्ज़त करे। जो तरीक़ा अदब और इज़्ज़त करने का मालिक ने मुक़र्रर किया हो उसकी पैरवी करे, जो वक़्त सलामी के लिए हाज़िर होने का मालिक ने मुक़र्रर किया हो, उस वक़्त ज़रूर हाज़िर हो और इस बात का सबूत दे कि वह उसकी वफ़ादारी और इताअत में साबित क़दम है।

बस यही तीन चीज़ें हैं जिनसे मिलकर इबादत बनती है। एक मालिक की वफ़ादारी, दूसरी मालिक की इताअत और तीसरी उसका अदब और उसकी ताज़ीम। अल्लाह तआला ने जो यह फ़रमाया कि:

وَمَا خَلَقْتُ الْجِنَّ وَالْإِنْسَ إِلَّا لِيَعْبُدُوْنِ ○

और मैंने जिन्न और इनसानों को इसलिए पैदा किया कि वे मेरी इबादत करें। (क़ुरआन, 51:56)

तो इसका मतलब दरअसल यह है कि अल्लाह तआला ने जिनों और इनसानों को इसलिए पैदा किया है कि वे सिर्फ़ अल्लाह के ही वफ़ादार हों, उसके ख़िलाफ़ किसी और के वफ़ादार न हों। सिर्फ़ अल्लाह के हुक्मों की इताअत करें, उसके ख़िलाफ़ किसी और का हुक्म न मानें और सिर्फ़ उसके आगे अदब और ताज़ीम से सिर झुकाएँ, किसी दूसरे के आगे सिर न झुकाएँ। इन्हीं तीन चीज़ों को अल्लाह ने 'इबादत' के जामेअ लफ़्ज़ में बयान किया है। यही मतलब उन तमाम आयतों का है जिनमें अल्लाह ने अपनी इबादत का हुक्म दिया है। हमारे प्यारे नबी (सल्ल०) और आपसे पहले जितने नबी (अलै०) ख़ुदा की तरफ़ से आए हैं, उन सबकी तालीम का सारा निचोड़ यही है—

أَلاَّ تَعْبُدُوْا إِلاَّ إِيَّاهُ.

अल्लाह के सिवा किसी की इबादत न करो। (क़ुरआन, 17:23)

यानी सिर्फ़ एक बादशाह है जिसका तुम्हें वफ़ादार होना चाहिए, और वह बादशाह 'अल्लाह' है। सिर्फ़ एक क़ानून है जिसकी तुम्हें पैरवी करनी चाहिए, और वह क़ानून 'अल्लाह का क़ानून' है और सिर्फ़ एक ही हस्ती ऐसी है जिसकी तुम्हें पूजा और बन्दगी करनी चाहिए और वह हस्ती अल्लाह की है।

इबादत के ग़लत मफ़हूम के नतीजे

इबादत का यह मतलब अपने दिमाग़ में रखिए और फिर ज़रा मेरे सवालों का जवाब देते जाइए।

आप उस नौकर के बारे में क्या कहेंगे जो मालिक की मुक़र्रर की हुई ड्यूटी पर जाने के बजाए हर वक़्त बस उसके सामने हाथ बाँधे खड़ा रहे और लाखों बार उसका नाम जपता चला जाए? मालिक उससे कहता है कि जाकर फ़लाँ-फ़लाँ लोगों के हक़ अदा कर, मगर वह जाता नहीं, बल्कि वहीं खड़े-खड़े मालिक को झुक-झुककर दस सलाम करता है और फिर हाथ बाँधकर खड़ा हो जाता है। मालिक उसे हुक्म देता है कि जा फ़लाँ-फ़लाँ

ख़राबियों को मिटा दे, मगर वह एक इंच वहाँ से नहीं हटता और सजदे पर सजदे किए चला जाता है। मालिक हुक्म देता है कि चोर का हाथ काट दे। यह हुक्म सुनकर बस वहीं खड़े-खड़े बहुत सुरीली आवाज़ से 'चोर का हाथ काट दे', 'चोर का हाथ काट दे' बीसियों बार पढ़ता रहता है, मगर एक बार भी ऐसी हुकूमत क़ायम करने की कोशिश नहीं करता जिसमें चोर का हाथ काटा जा सके। क्या आप कह सकते हैं कि यह आदमी वाक़ई मालिक की बन्दगी कर रहा है? अगर आपका कोई नौकर यह तरीक़ा अपनाए तो मैं जानता हूँ कि आप उसे क्या कहेंगे। मगर हैरत है आपपर कि ख़ुदा का जो नौकर ऐसा करता है आप उसे बड़ा इबादतगुज़ार कहते हैं! यह ज़ालिम सुबह से शाम तक ख़ुदा जाने कितनी बार क़ुरआन शरीफ़ में ख़ुदा के हुक्मों को पढ़ता है, मगर उन हुक्मों को पूरा करने के लिए अपनी जगह से हिलता तक नहीं, बल्कि नफ़्ल-पर-नफ़्ल पढ़े जाता है, हज़ार दाना तसबीह पर ख़ुदा का नाम जपता है और सुरीली आवाज़ में क़ुरआन की तिलावत करता रहता है। आप उसकी ये हरकतें देखते हैं और कहते हैं कि कैसा ज़ाहिद, आबिद बन्दा है! यह ग़लतफ़हमी सिर्फ़ इसलिए है कि आप इबादत का सही मतलब नहीं जानते।

एक और नौकर है जो रात-दिन ड्यूटी तो दूसरों की अंजाम देता है, हुक्म दूसरों का सुनता और मानता है, दूसरों के क़ानून पर चलता है और अपने असल मालिक के फ़रमान की हर वक़्त ख़िलाफ़वर्ज़ी किया करता है, मगर सलामी के वक़्त मालिक के सामने हाज़िर हो जाता है और ज़बान से मालिक का ही नाम जपता रहता है। अगर आपमें से किसी शख़्स का नौकर यह तरीक़ा अपनाए तो आप क्या करेंगे? क्या आप उसकी सलामी को उसके मुँह पर न मार देंगे? जब वह ज़बान से आपको आक़ा और मालिक कहेगा तो क्या आप फ़ौरन यह जवाब न देंगे कि तू परले दर्जे का झूठा और बेईमान है। तनख़्वाह मुझसे लेता है और नौकरी दूसरों की करता है। ज़बान से मुझे मालिक कहता है और हक़ीक़त में ग़ैरों की ख़िदमत करता फिरता है? यह तो एक मामूली अक़्ल की बात है जिसे आप में से हर शख़्स समझ सकता है। मगर कैसी हैरत की बात है कि जो लोग रात-दिन ख़ुदा के क़ानून को तोड़ते हैं, काफ़िरों और मुशरिकों के कहने पर चलते हैं और अपनी ज़िन्दगी के मामलों में ख़ुदा के हुक्म की कोई

परवाह नहीं करते! उनकी नमाज़ और रोज़े और तसबीह और तिलावते क़ुरआन व हज और ज़कात को आप ख़ुदा की इबादत समझते हैं। यह ग़लतफ़हमी भी इसी वजह से है कि आप इबादत के असल मतलब को नहीं जानते हैं।

एक और नौकर की मिसाल लीजिए। मालिक ने अपने नौकरों के लिए जो वर्दी मुक़र्रर की है, नौकर ठीक उसी नाप-तौल के साथ उस वर्दी को पहनता है, बड़े अदब और ताज़ीम के साथ मालिक की ख़िदमत में हाज़िर होता है, हर हुक्म को सुनकर इस तरह झुककर 'सिर आँखों पर' कहता है कि मानो उससे बढ़कर हुक्म माननेवाला नौकर कोई नहीं। सलामी के वक़्त सबसे आगे जाकर खड़ा होता है और मालिक का नाम जपने में तमाम नौकरों से बाज़ी ले जाता है। मगर दूसरी तरफ़ वही नौकर मालिक के दुश्मनों और बाग़ियों की ख़िदमत बजा लाता है, मालिक के ख़िलाफ़ उनकी साज़िशों में हिस्सा लेता है और मालिक के नाम को दुनिया से मिटाने में जो कोशिश भी वे करते हैं उसमें यह कमबख़्त उनका साथ देता है। रात के अँधेरे में तो मालिक के घर में सेंध लगाता है और सुबह बड़े वफ़ादार नौकरों की तरह हाथ बाँधकर मालिक की सेवा में हाज़िर हो जाता है। ऐसे नौकर के बारे में आप क्या कहेंगे? यही ना कि वह मुनाफ़िक़ है, बाग़ी है, नमकहराम है। मगर ख़ुदा के जो नौकर ऐसे हैं उनको आप क्या कहा करते हैं? किसी को 'पीर साहब' और किसी को 'हज़रत मौलाना' और किसी को 'दीनदार', 'मुत्तक़ी' और 'इबादतगुज़ार'। यह सिर्फ़ इसलिए कि आप उनके मुँह पर पूरे नाप की दाढ़ियाँ देखकर, उनके टखनों से दो-दो इंच ऊँचे पाजामे देखकर, उनके माथों पर नमाज़ के घट्टे देखकर और उनकी लम्बी-लम्बी नमाज़ें और मोटी-मोटी तसबीहें देखकर समझते हैं कि बड़े दीनदार और इबादतगुज़ार हैं। यह ग़लतफ़हमी भी इसी वजह से है कि आपने इबादत और दीनदारी का मतलब ही ग़लत समझा है।

आप समझते हैं कि हाथ बाँधकर क़िबले की तरफ़ मुँह करके खड़ा होना, घुटनों पर हाथ रखकर झुकना, ज़मीन पर हाथ टेककर सजदा करना और कुछ मुक़र्रर लफ़्ज़ ज़बान से अदा करना बस यही थोड़े-से काम और हरकात ही इबादत हैं। आप समझते हैं कि रमज़ान की पहली तारीख़ से शव्वाल का चाँद निकलने तक रोज़ाना सुबह से शाम तक भूखे-प्यासे रहने

का नाम इबादत है, आप समझते हैं कि क़ुरआन के कुछ रुकू ज़बान से पढ़ देने का नाम इबादत है; आप समझते हैं कि मक्का शरीफ़ जाकर काबे के गिर्द तवाफ़ करने का नाम इबादत है। ग़रज़ आपने कुछ कामों की ज़ाहिरी शक्लों का नाम इबादत रख छोड़ा है और जब कोई शख़्स इन शक्लों के साथ इन कामों को पूरा कर लेता है तो आप ख़याल करते हैं कि उसने ख़ुदा की इबादत कर ली और

وَمَا خَلَقْتُ الْجِنَّ وَالْاِنْسَ اِلاَّ لِيَعْبُدُوْنِ○

'व मा ख़लक़्तुल् जिन–न वल् इन्–स इल्ला लि यअ्बुदून'

मैने जिन्न और इनसानों को इसके सिवा किसी और ग़रज़ के लिए पैदा नहीं किया कि वे मेरी इबादत करें।

का मक़सद पूरा हो गया। अब वह अपनी ज़िन्दगी में आज़ाद है कि जो चाहे करे।

इबादत — पूरी ज़िन्दगी में बन्दगी

लेकिन असल हक़ीक़त यह है कि अल्लाह ने जिस इबादत के लिए आपको पैदा किया है और जिसका आपको हुक्म दिया है वह कुछ और ही चीज़ है। वह इबादत यह है कि आप अपनी ज़िन्दगी में हर वक़्त, हर हाल में ख़ुदा के क़ानून पर चलें और हर उस क़ानून की पाबन्दी से आज़ाद हो जाएँ जो अल्लाह के क़ानून के ख़िलाफ़ हो। आपकी हर सरगर्मी उस हद के अन्दर हो जो ख़ुदा ने आपके लिए मुक़र्रर की है। आपका हर काम उस तरीक़े के मुताबिक़ हो जो ख़ुदा ने बता दिया है। इस ढंग से जो ज़िन्दगी आप बिताएँगे, वह पूरी की पूरी इबादत होगी। ऐसी ज़िन्दगी में आपका सोना भी इबादत है और जागना भी, खाना भी इबादत है और पीना भी, चलना-फिरना भी इबादत है और बात करना भी, यहाँ तक कि बीवी के पास जाना और अपने बच्चों को प्यार करना भी इबादत है। जिन कामों को आप बिलकुल दुनियादारी कहते हैं वे सब दीनदारी और इबादत हैं। अगर आप इनको अंजाम देने में ख़ुदा की मुक़र्रर की हुई हदों का लिहाज़ करें और ज़िन्दगी में हर-हर क़दम पर यह देखकर चलें कि ख़ुदा के नज़दीक जायज़ क्या है और नाजायज़ क्या, हलाल क्या है और हराम क्या, फ़र्ज़

क्या चीज़ की गई है और मना किस चीज़ से किया गया है, किस चीज़ से ख़ुदा ख़ुश होता है और किस चीज़ से नाराज़ होता है? मसलन आप रोज़ी कमाने के लिए निकलते हैं, इस काम में बहुत-से मौक़े ऐसे भी आते हैं जिनमें हराम का माल काफ़ी आसानी के साथ आपको मिल सकता है। अगर आपने ख़ुदा से डरकर वह माल न लिया और सिर्फ़ हलाल की रोटी कमाकर लाए, तो यह जितना वक़्त आपने रोटी कमाने में ख़र्च किया, यह सब इबादत था और यह रोटी घर लाकर जो आपने ख़ुद खाई और बीवी, बच्चों और ख़ुदा के बताए हुए दूसरे हक़दारों को खिलाई, इस सबपर आप अज्र व सवाब के हक़दार हो गए। आपने अगर रास्ता चलने में कोई पत्थर या काँटा हटा दिया, इस ख़याल से कि ख़ुदा के बन्दों को तकलीफ़ न पहुँचे, तो यह भी इबादत है। आपने अगर बीमार की ख़िदमत की या किसी अंधे को रास्ता चलाया या किसी मुसीबत के मारे हुए की मदद की तो यह भी इबादत है। आपने अगर बातचीत करने में झूठ से, ग़ीबत से, गाली बकने और दिल दुखाने से परहेज़ किया और ख़ुदा से डरकर सिर्फ़ हक़ बात की, तो जितना वक़्त आपने बातचीत में गुज़ारा, वह सब इबादत में लगा।

इसलिए ख़ुदा की असली इबादत यह है कि होश सँभालने के बाद से मरते दम तक आप ख़ुदा के क़ानून पर चलें और उसके हुक्म के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारें। इस इबादत के लिए कोई वक़्त मुक़र्रर नहीं है। यह इबादत हर वक़्त होनी चाहिए। इस इबादत के लिए कोई एक शक्ल नहीं है, हर काम और हर शक्ल में उसी की इबादत होनी चाहिए। जब आप यह नहीं कह सकते कि मैं फ़लाँ वक़्त ख़ुदा का बन्दा हूँ और फ़लाँ वक़्त उसका बन्दा नहीं हूँ, तो आप यह भी नहीं कह सकते कि फ़लाँ वक़्त उसकी बन्दगी और इबादत के लिए है और फ़लाँ वक़्त उसकी इबादत और बन्दगी के लिए नहीं है।

भाइयो! आपको इबादत का मतलब मालूम हो गया और यह भी मालूम हो गया कि ज़िन्दगी में हर वक़्त और हर हाल में ख़ुदा की बन्दगी और उसके हुक्म पर चलने का नाम ही 'इबादत' है। अब आप पूछेंगे कि यह नमाज़, रोज़ा और हज वग़ैरह क्या चीज़ें हैं? इसका जवाब यह है कि दरअसल ये इबादतें जो अल्लाह ने आपपर फ़र्ज़ की हैं, उनका मक़सद आपको उस

बड़ी इबादत के लिए तैयार करना है जो आपको ज़िन्दगी में हर वक़्त हर हाल में अदा करनी चाहिए। नमाज़ आपको दिन में पाँच वक़्त याद दिलाती है कि तुम अल्लाह के बन्दे हो, उसी की बन्दगी तुम्हें करनी चाहिए। रोज़ा साल में एक बार और पूरे एक महीने तक आपको इसी बन्दगी के लिए तैयार करता है। ज़कात आपको बार-बार ध्यान दिलाती है कि यह माल जो तुमने कमाया है, वह ख़ुदा की देन है। इसको सिर्फ़ अपने मन की ख़्वाहिशों पर ख़र्च न कर दो, बल्कि अपने मालिक का हक़ अदा करो। हज दिल पर ख़ुदा की मुहब्बत और उसकी बड़ाई का ऐसा नक़्श बिठाता है कि एक बार अगर वह बैठ जाए तो सारी ज़िन्दगी इसका असर दिल से दूर नहीं हो सकता। इन सब इबादतों को अदा करने के बाद अगर आप इस लायक़ हो गए कि आपकी सारी ज़िन्दगी ख़ुदा की इबादत बन जाए तो बेशक आपकी नमाज़, नमाज़ है और रोज़ा, रोज़ा है; ज़कात, ज़कात है और हज, हज है। लेकिन अगर यह मक़सद पूरा न हुआ तो सिर्फ़ रुकूअ् और सज्दा करने और भूख-प्यास के साथ दिन गुज़ारने और हज की रस्में अदा करने और ज़कात की रक़म निकाल देने से कुछ हासिल नहीं। इन ज़ाहिरी तरीक़ों की मिसाल तो ऐसी है जैसे एक जिस्म कि अगर उसमें जान है, वह चलता-फिरता है और काम करता है तो बेशक एक ज़िन्दा इनसान है, लेकिन अगर उसमें जान ही नहीं तो वह एक मुर्दा-लाश है। मुर्दे के हाथ, पाँव, आँख, नाक सब कुछ होते हैं मगर उसमें जान ही नहीं होती, इसलिए आप उसे मिट्टी में दबा देते हैं। इसी तरह अगर नमाज़ के अरकान पूरे अदा हों या रोज़े की शर्तें पूरी अदा कर दी जाएँ, मगर ख़ुदा का डर, उसकी मुहब्बत और उसकी वफ़ादारी व इताअत न हो, जिसके लिए नमाज़ और रोज़ा फ़र्ज़ किया गया है, तो वह भी एक बेजान चीज़ होगी।

अगले ख़ुतबों में मैं आपको तफ़सील के साथ बताऊँगा कि जो इबादतें फ़र्ज़ की गई हैं, उनमें से हर एक किस तरह उस बड़ी इबादत के लिए इनसान को तैयार करती हैं, और अगर इन इबादतों को आप समझकर अदा करें और उनका असल मक़सद पूरा करने की कोशिश करें तो इससे आपकी ज़िन्दगी पर क्या असर पड़ सकता है?

नमाज़

मुसलमान भाइयो! पिछले ख़ुतबे में मैंने आपके सामने इबादत का असल मतलब बयान किया था और यह वादा किया था कि इस्लाम में जो इबादतें फ़र्ज़ की गई हैं उनके बारे में आपको बताऊँगा कि ये इबादतें किस तरह आदमी को उस बड़ी और असली इबादत के लिए तैयार करती हैं जिसके लिए अल्लाह ने जिन्न और इनसान को पैदा किया है। इस सिलसिले में सबसे बड़ी और सबसे अहम चीज़ नमाज़ है और आज के ख़ुतबे में सिर्फ़ इसी के बारे में आपसे कुछ बयान करूँगा।

इबादत का अस्ल मफ़हूम

यह तो आपको मालूम हो चुका है कि इबादत असल में बन्दगी को कहते हैं। और जब आप ख़ुदा के बन्दे ही पैदा हुए हैं तो आप किसी वक़्त, किसी हाल में भी उसकी बन्दगी से आज़ाद नहीं हो सकते। जिस तरह आप यह नहीं कह सकते कि मैं इतने घण्टे या इतने मिनटों के लिए ख़ुदा का बन्दा हूँ और बाक़ी वक़्त में मैं उसका बन्दा नहीं हूँ, इसी तरह आप यह भी नहीं कह सकते कि मैं इतना वक़्त ख़ुदा की इबादत में सर्फ़ करूँगा और बाक़ी वक़्तों में मुझे आज़ादी है कि जो चाहूँ करूँ। आप तो ख़ुदा के पैदाइशी ग़ुलाम हैं। उसने आपको बन्दगी ही के लिए पैदा किया है। इसलिए आपकी सारी ज़िन्दगी उसकी बन्दगी में सर्फ़ होनी चाहिए और कभी एक लम्हे के लिए आपको उसकी इबादत से ग़ाफ़िल नहीं होना चाहिए।

यह भी मैं आपको बता चुका हूँ कि इबादत के मानी दुनिया के काम-काज से अलग होकर एक कोने में बैठ जाने और अल्लाह-अल्लाह करने के नहीं हैं, बल्कि हक़ीक़त में इबादत के मानी यह हैं कि इस दुनिया में आप जो कुछ भी करें, ख़ुदा के क़ानून के मुताबिक़ करें। आपका सोना और जागना, आपका खाना और पीना, आपका चलना और फिरना, ग़रज़ कि सब कुछ ख़ुदा के क़ानून की पाबन्दी में हो। आप जब अपने घर

में बीवी-बच्चों, भाई-बहनों और रिश्तेदारों के पास हों तो उनके साथ इस तरह पेश आएँ, जिस तरह ख़ुदा ने हुक्म दिया है। जब अपने दोस्तों में हँसें और बोलें, उस वक़्त भी आपको ख़याल रहे कि हम ख़ुदा की बन्दगी से आज़ाद नहीं हैं। जब आप रोज़ी कमाने के लिए निकलें और लोगों से लेन-देन करें, उस वक़्त भी एक-एक बात और एक-एक काम में ख़ुदा के हुक्मों का ख़याल रखें और कभी उस हद से न बढ़ें जो ख़ुदा ने मुक़र्रर कर दी है। जब आप रात के अँधेरे में हों और कोई गुनाह इस तरह कर सकते हों कि दुनिया में कोई आपको देखनेवाला न हो, उस वक़्त भी आपको याद रहे कि ख़ुदा आपको देख रहा है और हक़ीक़त में डर उसी का होना चाहिए न कि दुनिया के लोगों का। जब आप जंगल में अकेले जा रहे हों और वहाँ कोई जुर्म इस तरह कर सकते हों कि किसी पुलिसमैन और किसी गवाह का खटका न हो तो उस वक़्त भी आप ख़ुदा को याद करके डर जाएँ और जुर्म से हाथ खींच लें। जब आप झूठ, बेईमानी और ज़ुल्म से बहुत-सा नफ़ा कमा सकते हों और कोई आपको रोकनेवाला न हो तो उस वक़्त भी आप ख़ुदा से डरें और उस फ़ायदे को इसलिए छोड़ दें कि ख़ुदा इससे नाराज़ होगा। और जब सच्चाई और ईमानदारी में आपको सरासर नुक़सान पहुँच रहा हो, उस वक़्त भी आप नुक़सान उठाना पसन्द कर लें, सिर्फ़ इसलिए कि ख़ुदा इससे ख़ुश होगा। इस तरह सिर्फ़ दुनिया को छोड़कर कोनों और गोशों में जा बैठना और तसबीह हिलाना इबादत नहीं है, बल्कि दुनिया के धंधों में फँसकर ख़ुदा के क़ानून की पाबन्दी करना इबादत है। अल्लाह के ज़िक्र का मतलब यह नहीं है कि ज़बान पर अल्लाह-अल्लाह जारी हो, बल्कि असल अल्लाह का ज़िक्र यह है कि दुनिया के झगड़ों और बखेड़ों में फँसकर भी आपको हर वक़्त ख़ुदा याद रहे, जो चीज़ें ख़ुदा से ग़ाफ़िल करनेवाली हैं उनमें मशग़ूल हों और फिर ख़ुदा से ग़ाफ़िल न हों। दुनिया की ज़िन्दगी में जहाँ ख़ुदाई क़ानून को तोड़ने के बहुत-से मौक़े बड़े-बड़े फ़ायदों के लालच और नुक़सान का डर लिए हुए आते हैं, वहाँ आप ख़ुदा को याद करें और उसके क़ानून की पैरवी पर क़ायम रहें। यह है ख़ुदा की असली याद। इसका नाम है ज़िक्रे इलाही और इसी ज़िक्र की तरफ़ क़ुरआन मजीद में इशारा किया गया है—

فَاِذَا قُضِيَتِ الصَّلٰوةُ فَانْتَشِرُوْا فِي الْاَرْضِ وَابْتَغُوْا مِنْ فَضْلِ اللّٰهِ وَ اذْكُرُوا اللّٰهَ كَثِيْرًا لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ○

यानी, जब नमाज़ हो चुके तो ज़मीन में फैल जाओ, ख़ुदा के फ़ज़्ल यानी हलाल रोज़ी की खोज में दौड़-धूप करो और (इस दौड़-धूप में) ख़ुदा को ज़्यादा-से-ज़्यादा याद करो, ताकि तुम्हें कामयाबी नसीब हो। (कुरआन, 62:10)

नमाज़ के फ़ायदे

इबादत का यह मतलब दिमाग़ में रखिए और ग़ौर कीजिए कि इतनी बड़ी इबादत अंजाम देने के लिए किन-किन चीज़ों की ज़रूरत है और नमाज़ किस तरह ये सब चीज़ें इनसान में पैदा करती है?

बन्दगी का एहसास

सबसे पहले तो इस बात की ज़रूरत है कि आपको बार-बार यह याद दिलाया जाता रहे कि आप ख़ुदा के बन्दे हैं और उसी की बन्दगी आपको हर वक़्त, हर काम में करनी है। यह याद दिलाने की ज़रूरत इसलिए है कि एक शैतान, आदमी के नफ़्स में बैठा हुआ है जो हर वक़्त कहता रहता है कि तू मेरा बन्दा है। और लाखों-करोड़ों शैतान हर तरफ़ दुनिया में फैले हुए हैं और उनमें से हर एक यही कह रहा है कि तू मेरा बन्दा है। इन शैतानों का जादू उस वक़्त तक नहीं उतर सकता जब तक इनसान को दिन में कई-कई बार यह याद न दिलाया जाए कि तू किसी का बन्दा नहीं, सिर्फ़ ख़ुदा का बन्दा है। यही काम नमाज़ करती है। सुबह उठते ही सब कामों से पहले वह आपको यही बात याद दिलाती है। फिर जब आप दिन में काम-काज में लगे रहते हैं, उस वक़्त फिर तीन बार उसी याद को ताज़ा करती है और जब आप रात को सोने के लिए जाते हैं तो आख़िरी बार फिर उसी को दोहराती है। यह नमाज़ का पहला फ़ायदा है और कुरआन में इसी वजह से नमाज़ को ज़िक्र कहा गया है, यानी यह ख़ुदा की याद है।

फ़र्ज़-शनासी

फिर चूँकि आपको इस ज़िन्दगी में हर क़दम पर ख़ुदा के हुक्मों को पूरा करना है, इसलिए यह भी ज़रूरी है कि आपमें अपना फ़र्ज़ पहचानने की ख़ूबी पैदा हो और इसके साथ आपको अपना फ़र्ज़ मुस्तैदी से अंजाम देने की आदत भी हो। जो शख़्स यह जानता ही न हो कि फ़र्ज़ का मतलब क्या है, वह तो कभी हुक्मों को पूरा कर ही नहीं सकता और जो शख़्स फ़र्ज़ के माने तो जानता हो, मगर उसकी तरबियत इतनी ख़राब हो कि फ़र्ज़ को फ़र्ज़ जानने के बावजूद वह उसे अदा करने की परवाह न करे, उससे कभी यह उम्मीद नहीं की जा सकती कि रात-दिन के चौबीस घंटों में जो हज़ारों हुक्म उसे दिए जाएँगे, उनको मुस्तैदी के साथ अंजाम देगा।

इताअत की मश्क़

जिन लोगों को फ़ौज या पुलिस में नौकरी करने का मौक़ा मिला है वे जानते हैं कि इन दोनों नौकरियों में ड्यूटी को समझने और उसे अदा करने की मश्क़ (Excercise) किस तरह कराई जाती है। रात-दिन में कई-कई बार बिगुल बजाया जाता है। सिपाहियों को एक जगह हाज़िर होने का हुक्म दिया जाता है और उनसे परेड कराई जाती है। यह सब इसलिए है कि उनको हुक्म बजा लाने की आदत हो, और उनमें से जो लोग ऐसे सुस्त और नालायक़ हों कि बिगुल की आवाज़ सुनकर भी घर में बैठे रहें या परेड में हुक्म के मुताबिक़ हरकत न करें, उन्हें पहले ही नाकारा समझकर नौकरी से अलग कर दिया जाए।

ठीक इसी तरह नमाज़ भी दिन में पाँच वक़्त बिगुल बजाती है, ताकि अल्लाह के सिपाही उसको सुनकर हर तरफ़ से दौड़े चले आएँ और साबित करें कि वे अल्लाह के हुक्मों को मानने के लिए तैयार हैं। जो मुसलमान इस बिगुल को सुनकर भी बैठा रहता है और अपनी जगह से नहीं हिलता वह असल में यह साबित करता है कि वह या तो फ़र्ज़ को पहचानता ही नहीं या अगर पहचानता है तो वह इतना नालायक़ और नाकारा है कि ख़ुदा की फ़ौज में रहने के क़ाबिल नहीं।

इसी लिए नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया कि जो लोग अज़ान की आवाज़

सुनकर अपने घरों से नहीं निकलते, मेरा जी चाहता है कि जाकर उनके घरों में आग लगा दूँ। और यही वजह है कि हदीस में नमाज़ को कुफ़्र और इस्लाम के बीच फ़र्क़ करनेवाली बताया गया है। नबी (सल्ल०) और सहाबा (रज़ि०) के ज़माने में कोई ऐसा शख़्स मुसलमान ही नहीं समझा जाता था जो नमाज़ के लिए जमाअत में हाज़िर न होता हो, यहाँ तक कि मुनाफ़िक़ लोग भी, जिन्हें इस बात की ज़रूरत होती थी कि उनको मुसलमान समझा जाए, ऐसा करने पर मजबूर होते थे कि जमाअत से नमाज़ पढ़ें। यही वजह है कि क़ुरआन में जिस चीज़ पर मुनाफ़िक़ों को मलामत की गई है वह यह नहीं है कि वे नमाज़ नहीं पढ़ते, बल्कि यह है कि हारे हुए जी से, बड़ी बददिली के साथ नमाज़ के लिए उठते हैं—

وَاِذَا قَامُوْٓا اِلَى الصَّلٰوةِ قَامُوْا كُسَالٰى۝

और जब वे नमाज़ के लिए उठते हैं तो कसमसाते हुए उठते हैं।

(क़ुरआन, 4:142)

इससे मालूम हुआ कि इस्लाम में किसी ऐसे शख़्स के मुसलमान समझे जाने की गुंजाइश नहीं है जो नमाज़ न पढ़ता हो, इसलिए कि इस्लाम सिर्फ़ अक़ीदा रखनेवाली चीज़ नहीं है, बल्कि अमली चीज़ है और अमली चीज़ भी ऐसी कि ज़िन्दगी में हर वक़्त, हर पल एक मुसलमान को इस्लाम पर अमल करने और कुफ़्र व फ़िस्क़ से लड़ने की ज़रूरत है। ऐसी ज़बरदस्त अमली ज़िन्दगी के लिए ज़रूरी है कि मुसलमान ख़ुदा के हुक्मों को पूरा करने के लिए हर वक़्त मुस्तैद हों। जो शख़्स इस क़िस्म की मुस्तैदी नहीं रखता, वह इस्लाम के लिए बिलकुल नाकारा है। इसी लिए दिन में पाँच वक़्त नमाज़ फ़र्ज़ की गई, ताकि जो लोग मुसलमान होने का दावा करते हैं, उनका बार-बार इमतिहान लिया जाता रहे कि वे वाक़ई मुसलमान हैं या नहीं और वाक़ई इस अमली ज़िन्दगी में ख़ुदा के हुक्मों को पूरा करने के लिए मुस्तैद हैं या नहीं। अगर वे ख़ुदाई परेड का बिगुल सुनकर हिलते तक नहीं तो साफ़ मालूम हो जाता है कि वे इस्लाम की अमली ज़िन्दगी के लिए तैयार नहीं हैं। इसके बाद उनका ख़ुदा को मानना और रसूल (सल्ल०) को मानना बिलकुल बेमानी है। इसी लिए क़ुरआन में

कहा गया है—

إِنَّهَا لَكَبِيرَةٌ إِلَّا عَلَى الْخٰشِعِيْنَ۝

यानी, और जो लोग ख़ुदा की बन्दगी और उसका हुक्म मानने के लिए तैयार नहीं हैं, सिर्फ़ उन्हीं को नमाज़ बोझ मालूम होती है। और जिसको नमाज़ बोझ मालूम हो, वह ख़ुद इस बात का सबूत पेश करता है कि वह ख़ुदा की बन्दगी व इताअत के लिए तैयार नहीं है। (कुरआन, 2:45)

ख़ुदा का ख़ौफ़ पैदा करना

तीसरी चीज़ ख़ुदा का डर है, जिसको हर वक़्त दिल में ताज़ा रखने की ज़रूरत है। मुसलमान इस्लाम के मुताबिक़ अमल कर ही नहीं सकता जब तक कि उसे यह यक़ीन न हो कि ख़ुदा हर वक़्त, हर जगह उसे देख रहा है। उसकी हर हरकत का ख़ुदा को इल्म है। ख़ुदा अँधेरे में भी उसको देखता है, ख़ुदा तनहाई में भी उसके साथ है। सारी दुनिया से छिप जाना मुमकिन है, मगर ख़ुदा से छिपना मुमकिन नहीं। सारी दुनिया की सज़ाओं से आदमी बच सकता है, मगर ख़ुदा की सज़ा से बचना नामुमकिन है। यही यक़ीन आदमी को ख़ुदा के हुक्मों की ख़िलाफ़वर्ज़ी से रोकता है! इसी यक़ीन के ज़ोर से वह हलाल और हराम की उन हदों का लिहाज़ रखने पर मजबूर हो जाता है जो अल्लाह ने ज़िन्दगी के मामलों में क़ायम की हैं। अगर यह यक़ीन कमज़ोर हो जाए तो मुसलमान सही मानों में मुसलमान की तरह ज़िन्दगी बसर कर ही नहीं सकता। इसी लिए अल्लाह ने दिन में पाँच वक़्त नमाज़ फ़र्ज़ की है ताकि वह इस यक़ीन को दिल में बार-बार मज़बूत करती रहे। इसी लिए क़ुरआन में ख़ुद अल्लाह ही ने नमाज़ के इस मक़सद को बयान कर दिया—

إِنَّ الصَّلٰوةَ تَنْهٰى عَنِ الْفَحْشَاءِ وَالْمُنْكَرِ۝

यानी, नमाज़ वह चीज़ है कि जो आदमी को बदी और बेहयाई से रोकती है। (क़ुरआन, 29:45)

इसकी वजह आप ग़ौर करके ख़ुद समझ सकते हैं। जैसे आप नमाज़ के लिए पाक होकर और वुज़ू करके आते हैं। अगर आप नापाक हों और नहाए बिना आ जाएँ या आपके कपड़े नापाक हों और उन्हीं को पहने हुए आ जाएँ या आपका वुज़ू न हो और आप यह कह दें कि मैं वुज़ू करके आया हूँ तो दुनिया में कौन आपको पकड़ सकता है? लेकिन आप ऐसा नहीं करते, क्यों? इसलिए कि आपको यक़ीन है कि ख़ुदा से यह गुनाह छिप नहीं सकता। इसी तरह नमाज़ में जो चीज़ें धीरे से पढ़ी जाती हैं, अगर उनको आप न पढ़ें तो किसी को ख़बर नहीं हो सकती, मगर आप ऐसा कभी नहीं करते, यह किस लिए? इसी लिए कि आपको यक़ीन है कि ख़ुदा सब कुछ सुन रहा है और आपकी रगे-जाँ से भी ज़्यादा क़रीब है। इसी तरह आप जंगल में भी नमाज़ पढ़ते हैं, रात के अँधेरे में भी नमाज़ पढ़ते हैं, अपने घर में जब अकेले होते हैं उस वक़्त भी नमाज़ पढ़ते हैं, हालाँकि कोई आपको देखनेवाला नहीं होता और किसी को यह मालूम नहीं होता कि आपने नमाज़ नहीं पढ़ी है। इसकी वजह क्या है? यही कि आप छिपकर भी ख़ुदा के हुक्म की ख़िलाफ़वर्ज़ी करने से डरते हैं और आपको यक़ीन है कि ख़ुदा से किसी जुर्म को छिपा पाना मुमकिन नहीं। इससे आप अन्दाज़ा कर सकते हैं कि नमाज़ किस तरह ख़ुदा का डर और उसके हाज़िर व नाज़िर, अलीम व ख़बीर होने का यक़ीन आदमी के दिल में बैठाती और ताज़ा करती रहती है। रात-दिन के चौबीस घंटों में आप हर वक़्त ख़ुदा की बन्दगी और इबादत कैसे कर सकते हैं, जब तक कि यह डर और यह यक़ीन आपके दिल में ताज़ा न होता रहे। अगर इस चीज़ से आपका दिल ख़ाली हो तो कैसे मुमकिन है कि रात-दिन जो हज़ारों मामले आपको दुनिया में पेश आते हैं, उनमें आप ख़ुदा से डरकर नेकी पर क़ायम रहेंगे और बदी से बचेंगे।

क़ानूने इलाही से वाक़फ़ियत

चौथी चीज़ जो ख़ुदा की इबादत के लिए सबसे ज़रूरी है वह यह है कि आप ख़ुदा के क़ानून से वाक़िफ़ हों। इसलिए कि अगर आपको क़ानून का इल्म ही न हो तो आप उसकी पाबंदी कैसे कर सकते हैं? यह काम

भी नमाज़ पूरा करती है। नमाज़ में क़ुरआन जो पढ़ा जाता है यह इसी लिए है कि रोज़ाना आप ख़ुदा के हुक्मों और उसके क़ानूनों से वाक़िफ़ होते रहें। जुमा का ख़ुतबा भी इसी लिए है कि आपको इस्लाम की तालीम का इल्म हो। जमाअत के साथ नमाज़ और जुमा से एक फ़ायदा यह भी है कि आलिम और अनपढ़ बार-बार एक जगह इकट्ठा होते रहें और लोगों को हमेशा ख़ुदा के हुक्मों से वाक़िफ़ होने का मौक़ा मिलता रहे। अब यह आपकी बदक़िस्मती है कि आप नमाज़ में जो कुछ पढ़ते हैं, उसे समझने की कोशिश नहीं करते। आपको जुमा के ख़ुतबे भी ऐसे सुनाए जाते हैं जिनसे आपको इस्लाम का कोई इल्म हासिल नहीं होता और नमाज़ की जमाअतों में आकर न आपके पढ़े-लिखे और दीन का इल्म रखनेवाले अपने अनपढ़ भाइयों को कुछ सुनाते हैं और न वे अपने आलिम भाइयों से कुछ पूछते हैं। नमाज़ तो आपको इन सब फ़ायदों का मौक़ा देती है। आप ख़ुद फ़ायदा न उठाएँ तो नमाज़ का क्या क़सूर?

इजतिमाइयत की मश्क़

पाँचवी चीज़ यह है कि कोई मुसलमान ज़िन्दगी के इस हंगामे में अकेला न हो, बल्कि सब मुसलमान मिलकर एक मज़बूत जमाअत बनें और ख़ुदा की इबादत, यानी उसके हुक्मों की पाबन्दी करने और उसके क़ानून पर अमल करने और उसके क़ानून को दुनिया में जारी करने के लिए एक-दूसरे की मदद करें। आप जानते हैं कि दुनिया में एक तरफ़ मुसलमान, यानी ख़ुदा के फ़रमाँबरदार बन्दे हैं और दूसरी तरफ़ कुफ़्फ़ार, यानी ख़ुदा के नाफ़रमान बन्दे। रात-दिन फ़रमाँबरदारी और नाफ़रमानी के बीच कशमकश जारी है। नाफ़रमान ख़ुदा के क़ानून को तोड़ते हैं और उसके ख़िलाफ़ दुनिया में शैतानी क़ानूनों को चलाते हैं। उनके मुक़ाबले में अगर एक-एक मुसलमान अकेले हो तो कामयाब नहीं हो सकता। ज़रूरत इसकी है कि ख़ुदा के फ़रमाँबरदार बन्दे एकजुट होकर बग़ावत और नाफ़रमानी का मुक़ाबला करें और ख़ुदा के क़ानून को लागू करें। यह इजतिमाई ताक़त पैदा करनेवाली चीज़, सारी चीज़ों से बढ़कर, नमाज़ है। पाँच वक़्त की जमाअत, फिर जुमा का बड़ा इजतिमा, फिर ईदों के इजतिमा, ये सब मिलकर मुसलमानों

को एक मज़बूत दीवार की तरह बना देते हैं और उनमें वह भाईचारा और मेल-जोल पैदाकर देते हैं जो रोज़ाना की अमली ज़िन्दगी में मुसलमानों को एक-दूसरे का मददगार बनाने के लिए ज़रूरी है।

नमाज़ में आप क्या पढ़ते हैं?

मुसलमान भाइयो! पिछले ख़ुतबे में आपको बता चुका हूँ कि नमाज़ किस तरह आदमी को अल्लाह की इबादत, यानी बन्दगी और इताअत, के लिए तैयार करती है। इस सिलसिले में जो कुछ मैंने कहा था, उससे आपने अन्दाज़ा कर लिया होगा कि जो आदमी नमाज़ को सिर्फ़ फ़र्ज़ और ख़ुदा का हुक्म जानकर क़ायदे के साथ अदा करता है, वह अगर नमाज़ की दुआओं का मतलब न समझता हो, तब भी उसके अन्दर ख़ुदा का ख़ौफ़ और उसके हाज़िर व नाज़िर होने का यक़ीन और उसकी अदालत में एक रोज़ हाज़िर होने का अक़ीदा हर वक़्त ताज़ा होता रहता है। उसके दिल में यह अक़ीदा हमेशा ज़िन्दा रहता है कि वह ख़ुदा के सिवा किसी और का बन्दा नहीं और ख़ुदा ही उसका असली बादशाह और हाकिम है। उसके अन्दर फ़र्ज़ को पहचानने की आदत और ख़ुदा के हुक्मों को बजा लाने के लिए मुस्तैदी पैदा होती है और उसमें वे ख़ूबियाँ अपने आप पैदा होने लगती हैं जो इनसान की सारी ज़िन्दगी को ख़ुदा की बन्दगी व इबादत बना देने के लिए ज़रूरी हैं।

अब मैं आपको यह बता देना चाहता हूँ कि अगर आदमी इसी नमाज़ को समझकर अदा करे और नमाज़ पढ़ते वक़्त यह भी जानता रहे कि वह क्या पढ़ रहा है तो उसके ख़यालों और उसकी आदतों और ख़स्लतों पर कितना ज़बरदस्त असर पड़ेगा, उसके ईमान की ताक़त किस क़द्र बढ़ती चली जाएगी और उसकी ज़िन्दगी का रंग कैसा पलट जाएगा।

अज़ान और उसके असरात

सबसे पहले अज़ान को लीजिए। दिन में पाँच वक़्त आपको यह कहकर पुकारा जाता है—

اَللّٰهُ اَكْبَرُ اَللّٰهُ اَكْبَرُ

अल्लाहु अकबर, अल्लाहु अकबर।

अल्लाह सबसे बड़ा है, अल्लाह सबसे बड़ा है।

اَشْهَدُ اَنْ لَآ اِلٰـهَ اِلاَّ اللّٰهُ

अश्हदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाह।

मैं गवाही देता हूँ कि ख़ुदा के सिवा कोई माबूद नहीं, कोई बन्दगी का हक़दार नहीं।

اَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا رَّسُوْلُ اللّٰهِ

अश्हदु अन-न मुहम्मदर्रसूलुल्लाह।

मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद (सल्ल०) अल्लाह के रसूल हैं।

حَيَّ عَلَى الصَّلٰوةِ

हय-य अलस्सलाह।

आओ नमाज़ के लिए।

حَيَّ عَلَى الْفَلاَحِ

हय-य अलल फ़लाह।

आओ उस काम के लिए जिसमें भलाई ही भलाई है!

اَللّٰهُ اَكْبَرُ اَللّٰهُ اَكْبَرُ

अल्लाहु अकबर, अल्लाहु अकबर।

अल्लाह सबसे बड़ा है।

لَآ اِلٰـهَ اِلاَّ اللّٰهُ

ला इला-ह इल्लल्लाह।

अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं।

देखिए यह कैसी ज़बरदस्त पुकार है। हर रोज़ पाँच बार यह आवाज़ किस तरह आपको याद दिलाती है कि 'ज़मीन में जितने बड़े ख़ुदाई के दावेदार नज़र आते हैं, सब झूठे हैं। ज़मीन व आसमान में एक ही हस्ती है जिसके लिए बड़ाई है और वही इबादत के लायक़ है। आओ उसकी इबादत करो, उसी की इबादत में तुम्हारे लिए दुनिया और आख़िरत की

भलाई है।' कौन है जो इस आवाज़ को सुनकर हिल न जाएगा? कैसे मुमकिन है कि जिसके दिल में ईमान हो, वह इतनी बड़ी गवाही और ऐसी ज़बरदस्त पुकार सुनकर अपनी जगह बैठा रह जाए और अपने मालिक के आगे सिर झुकाने के लिए दौड़ न पड़े!

वुज़ू

इस आवाज़ को सुनकर आप उठते हैं और सबसे पहले अपना जायज़ा लेकर देखते हैं कि मैं पाक हूँ या नापाक, मेरे कपड़े पाक हैं या नहीं, मेरा वुज़ू है या नहीं। मानो आपको इस बात का एहसास है कि दोनों जहान के बादशाह के दरबार में हाज़िरी का मामला दुनिया के दूसरे सब मामलों से अलग है। दूसरे काम तो हर हाल में किए जा सकते हैं। मगर यहाँ जिस्म और लिबास की पाकी और इस पाकी पर और ज़्यादा पाकी (यानी वुज़ू) के बग़ैर हाज़िरी देना सख़्त बेअदबी है। इस एहसास के साथ आप पहले अपने पाक होने का इतमीनान करते हैं और फिर वुज़ू शुरू कर देते हैं। इस वुज़ू के दौरान में अगर आप अपने मुँह, हाथ-पैर धोने के साथ-साथ अल्लाह का ज़िक्र करते रहें और फ़ारिग़ होकर वह दुआ पढ़ें जो अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने सिखाई है तो सिर्फ़ आपके मुँह, हाथ और पैर ही न धुलेंगे बल्कि साथ-साथ आपका दिल भी धुल जाएगा। वह दुआ यह है—

اَشْهَدُ اَنْ لاَّ إِلٰـهَ إِلاَّ اللّٰهُ وَحْدَهٗ لاَ شَرِيْكَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ

وَرَسُوْلُهٗ، اَللّٰهُمَّ اجْعَلْنِىْ مِنَ التَّوَّابِيْنَ وَاجْعَلْنِىْ مِنَ الْمُتَطَهِّرِيْنَ.

अश्हदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु, वह्दहु ला शरी-क लहु, व अश्हदु अन-न मुहम्मदन' अब्दुहू व रसूलुहू। अल्लाहुम्मज 'अलनी मिनत्तव्वा बी-न, व ज 'अलनी मिनल मु-त-तह हिरीन।

मैं गवाही देता हूँ कि अकेले एक लाशरीक ख़ुदा के सिवा कोई माबूद नहीं है और मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद (सल्ल०) अल्लाह के बन्दे और रसूल हैं। ऐ अल्लाह! मुझे तौबा करनेवालों में शामिल कर और मुझे पाकीज़गी इख़तियार करनेवाला बना।

नीयत

इसके बाद आप नमाज़ के लिए खड़े होते हैं। मुँह क़िबला के सामने है। पाक-साफ़ होकर दोनों जहान के बादशाह के दरबार में हाज़िर हैं। सबसे पहले आपकी ज़बान से ये अलफ़ाज़ निकलते हैं— 'अल्लाहु अकबर' (अल्लाह सबसे बड़ा है)। इस ज़बरदस्त हक़ीक़त का इक़रार करते हुए आप कानों तक हाथ उठाते हैं, मानो दुनिया और दुनिया की सभी चीज़ों से दस्तबरदार हो रहे हैं। फिर 'अल्लाहु अकबर' कहकर हाथ बाँध लेते हैं, मानो अब आप बिलकुल अपने बादशाह के सामने हाथ बाँधे अदब के साथ खड़े हैं। इसके बाद आप क्या अर्ज़ करते हैं—

तसबीह

سُبْحٰنَكَ اَللّٰهُمَّ وَبِحَمْدِكَ وَتَبَارَكَ اسْمُكَ وَتَعَالٰى جَدُّكَ وَلاَ اِلٰـهَ غَيْرُكَ.

सुब्हा-न-क अल्लाहुम-म व बि हमदि-क, व तबा-र कसमु-क, व त आला जद्दु-क वला इला-ह ग़ैरु-क।

तेरी पाकी बयान करता हूँ ऐ अल्लाह और वह भी तेरी तारीफ़ के साथ! बड़ी बरकतवाला है तेरा नाम; सबसे बुलन्द व बरतर है तेरी बुज़ुर्गी और कोई माबूद नहीं तेरे सिवा।

तअ़व्वुज़

اَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ.

अ ऊ़ज़ु बिल्लाहि मिनश्शैतानिर्रजीम।

ख़ुदा की पनाह माँगता हूँ मैं शैतान मरदूद की दरअन्दाज़ी और शरारत से।

तस्मिया

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ط

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम।

शुरू करता हूँ मैं अल्लाह के नाम से जो निहायत मेहरबान और रहम फ़रमानेवाला है।

हम्द

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ۝

अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल आलमीन।

तारीफ़ ख़ुदा के लिए है जो सारे जहानवालों का पालनहार है।

اَلرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ۝

अर्रहमानिर्रहीम।

निहायत रहमतवाला बड़ा मेहरबान है।

مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ۝

मालिकि यौमिद्दीन।

रोज़े आख़िरत का मालिक है (जिसमें कर्मों का फ़ैसला किया जाएगा और हर एक को उसके किए का बदला मिलेगा)।

اِيَّاكَ نَعْبُدُ وَاِيَّاكَ نَسْتَعِيْنُ۝

इय्या-क नअ़बुदु व इय्या-क नस्तईन।

मालिक! हम तेरी ही इबादत करते हैं और तुझी से मदद माँगते हैं।

اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ۝

इहदिनस्सिरातल मुस्तक़ीम।

हमको सीधा रास्ता दिखा।

صِرَاطَ الَّذِيْنَ اَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ۝

सिरातल लज़ी-न अनअ़म-त अ़लैहिम।

ऐसे लोगों का रास्ता जिनपर तूने फ़ज़्ल किया और इनाम फ़रमाया।

غَيْرِ الْمَغْضُوْبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّآلِّيْنَ۝

ग़ैरिल मग़ज़ूबि अ़लैहिम व लज़्ज़ाल्लीन।

जिनपर तेरा ग़ज़ब नाज़िल नहीं हुआ और जो भटके हुए लोग नहीं हैं।

आमीन! آمین.

ख़ुदाया ऐसा ही हो! मालिक हमारी इस दुआ को क़बूल कर।

इसके बाद आप कुरआन की कुछ आयतें पढ़ते हैं, जिनमें से हर एक में अमृत भरा हुआ है, नसीहत है, इबरत है, सबक़ है और उसी सीधे रास्ते की हिदायत है, जिसके लिए सूरा फ़ातिहा में आप दुआ कर चुके थे। मिसाल के तौर पर कुरआन की यह सूरा (103:1-3)—

वलअ़स्र

وَالْعَصْرِ ○ إِنَّ الْإِنْسَانَ لَفِي خُسْرٍ ○

वल अ़सरि इन्नल इनसा-न लफ़ी ख़ुस्र।

ज़माने की क़सम, इनसान घाटे में है।

إِلَّا الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ.

इल्लल लज़ी-न आमनू व अ़मिलुस्सालिहाति,

मगर घाटे से बचे हुए सिर्फ़ वे लोग हैं जो ईमान लाए और जिन्होंने नेक अमल किए।

وَتَوَاصَوْا بِالْحَقِّ وَتَوَاصَوْا بِالصَّبْرِ ○

व तवासौ बिल हक़्क़ि व तवासौ बिस्सब्र।

और जिन्होंने एक-दूसरे को हक़ पर चलने की हिदायत की और हक़ पर जमे रहने के लिए उभारते रहे।

इससे यह सबक़ मिलता है कि तबाही और नामुरादी से इनसान बस इसी तरह बच सकता है कि ईमान लाए और नेक अमल करे और सिर्फ़ इतना ही काफ़ी नहीं, बल्कि ईमानदारों की एक जमाअत ऐसी होनी चाहिए जो दीन पर क़ायम होने और क़ायम रहने में एक-दूसरे की मदद करती रहे।

या मिसाल के तौर पर क़ुरआन की यह सूरा (107:1-7)—

अल माऊ़न

اَرَاَيْتَ الَّذِیْ يُكَذِّبُ بِالدِّيْنِ○

अ-र-ऐ तल्लज़ी युकज़्ज़िबु बिद्दीन।

तूने देखा उस शख़्स को जो बदले के दिन को नहीं मानता, वह कैसा आदमी होता है?

فَذٰلِكَ الَّذِیْ يَدُعُّ الْيَتِيْمَ○

फ़ज़ालिकल्लज़ी यदुउ़्ल यतीम।

ऐसा ही आदमी यतीम को धुत्कारता है।

وَلَا يَحُضُّ عَلٰى طَعَامِ الْمِسْكِيْنِ○

वला यहुज़्ज़ु अ़ला तआमिल मिसकीन।

और मिसकीन को ख़ुद खाना खिलाना तो दूर रहा, दूसरों से भी यह कहना पसन्द नहीं करता कि ग़रीब को खाना खिला दो।

فَوَيْلٌ لِّلْمُصَلِّيْنَ الَّذِيْنَ هُمْ عَنْ صَلَاتِهِمْ سَاهُوْنَ الَّذِيْنَ هُمْ يُرَآءُوْنَ وَيَمْنَعُوْنَ الْمَاعُوْنَ○

फ़वैलुल लिल् मुसल्लीनल्लज़ी-न हुम अ़न सलातिहिम साहून, अल्लज़ी-न हुम युराऊन, व यम्न ऊ़नल् माऊ़न।

तबाही है ऐसे नमाज़ियों के लिए जो (आख़िरत के दिन पर यक़ीन नहीं रखते, इसलिए) नमाज़ से ग़फ़लत करते हैं और पढ़ते भी हैं तो सिर्फ़ दिखावे के लिए और उनके दिल ऐसे छोटे हैं कि ज़रा-ज़रा सी चीज़ें हाजतमन्दों को देते हुए भी उनका दिल दुखता है।

इससे यह सबक़ मिलता है कि आख़िरत का यक़ीन इस्लाम की जान है। इसके बिना आदमी कभी उस रास्ते पर चल ही नहीं सकता जो ख़ुदा का सीधा रास्ता है।

मिसाल के तौर पर क़ुरआन की यह सूरा (104:1-9) देखिए—

हु-म-ज़ह

وَيۡلٌ لِّكُلِّ هُمَزَةٍ لُّمَزَةِ ۝

वैलुल्लिकुल्लि हु-म-ज़तिल लु-म-ज़ह।

अफ़सोस है उस शख़्स की हालत पर जो लोगों के ऐब ढूँढ़ता और उनपर आवाज़ें कसता है।

الَّذِىۡ جَمَعَ مَالاً وَّعَدَّدَهٗ ۝

अल्लज़ी ज-म-अ़ मालौं व अ़द्द-दह।

रुपया जमा करता और गिन-गिनकर रखता है।

يَحۡسَبُ اَنَّ مَالَهٗۤ اَخۡلَدَهٗ ۝

यह-सबु अन-न मा-लहू अख़-ल-दह।

अपने दिल में समझता है कि उसका माल हमेशा रहेगा।

كَلاَّ لَيُنۡۢبَذَنَّ فِى الۡحُطَمَةِ ۝

कल्ला ल-युम बज़न-न फ़िल हु-त-मह।

हरगिज़ नहीं, वह एक दिन ज़रूर (मरेगा और) हुतमा में डाला जाएगा।

وَمَاۤ اَدۡرٰكَ مَا الۡحُطَمَةُ ۝

वमा अदरा-क मल हु-त-मह।

और तुम्हें क्या मालूम है कि हुतमा क्या चीज है?

نَارُ اللّٰهِ الۡمُوۡقَدَةُ الَّتِىۡ تَطَّلِعُ عَلَى الۡاَفۡـِٕدَةِ ۝

नारुल्लाहिल मू-क-द-तुल्लती तत्तलिउ ़अ़लल अफ़-इदह।

अल्लाह की भड़काई हुई आग, जिसकी लपटें दिलों पर छा जाती हैं।

اِنَّهَا عَلَيۡهِمۡ مُّؤۡصَدَةٌ فِىۡ عَمَدٍ مُّمَدَّدَةٍ ۝

इन्नहा अ़लैहिम मुअ्स-द-तुन फ़ी अ़-म-दिम मुमद-द-दह।

वह ऊँचे-ऊँचे सुतून जैसे शोलों की सूरत में उनको घेर लेगी।

ग़रज़ आप क़ुरआन पाक की जितनी सूरतें या आयतें नमाज़ में पढ़ते हैं वह कोई न कोई ऊँचे दर्जे की नसीहत या हिदायत आपको देती हैं और आपको बताती हैं कि ख़ुदा के हुक्म क्या हैं, जिनके मुताबिक़ आपको दुनिया में चलना चाहिए।

रुकू

इन हिदायतों को पढ़ने के बाद आप

اَللّٰهُ اَكْبَرُ

अल्लाहु अकबर

अल्लाह सबसे बड़ा है।

कहते हुए रुकू करते हैं। घुटनों पर हाथ रखकर अपने मालिक के आगे झुकते हैं और बार-बार कहते हैं:

سُبْحَانَ رَبِّیَ الْعَظِیْمِ

सुब्हा-न रब्बियल अ़ज़ीम।

पाक है मेरा पालनहार जो बड़ा बुज़ुर्ग है।

फिर सीधे खड़े होते हुए कहते हैं:

سَمِعَ اللّٰهُ لِمَنْ حَمِدَهٗ

समि अ़ल्लाहु लिमन हमिदह।

अल्लाह ने सुन ली उस शख़्स की बात जिसने उसकी तारीफ़ बयान की।

और फिर खड़े होकर कहते हैं:

رَبَّنَا لَكَ الْحَمْدُ

रब्बना लकल हम्द।

ऐ हमारे रब! तेरे ही लिए तारीफ़ है।

सजदा

फिर अल्लाहु अकबर कहते हुए सजदे में गिर जाते हैं और बार-बार कहते हैं :

سُبْحٰنَ رَبِّیَ الْاَعْلٰی

सुब्हा-न रब्बियल अ़ाला।

पाक है मेरा पालनहार जो सबसे आला व बरतर है।

अत्तहिय्यात

फिर अल्लाहु अकबर कहते हुए सिर उठाते हैं और बड़े अदब से बैठकर यह पढ़ते हैं :

اَلتَّحِیَّاتُ لِلّٰہِ وَالصَّلَوٰتُ وَالطَّیِّبَاتُ

अत्तहिय्यातु लिल्लाहि वस्स-ल-वातु वत्तय्यिबातु।

हमारी सलामियाँ, हमारी नमाज़ें और सारी पाकीज़ा बातें अल्लाह के लिए हैं।

اَلسَّلَامُ عَلَیْكَ اَیُّهَا النَّبِیُّ وَرَحْمَةُ اللّٰهِ وَبَرَكَاتُهٗ

अस्सलामु अ़लै-क अय्युहन्नबिय्यु व रहमतुल्लाहि व ब-र-कातुहू।

सलाम आप पर ऐ नबी! और अल्लाह की रहमत और बरकतें।

اَلسَّلَامُ عَلَیْنَا وَعَلٰی عِبَادِ اللّٰهِ الصَّالِحِیْنَ

अस्सलामु अ़लैना व अ़ला इ़बादिल्लाहिस्सालिहीन।

सलामती हो हमपर और अल्लाह के सब नेक बन्दों पर।

اَشْهَدُ اَنْ لَّاۤ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ

अशहदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु व अशहदु अन-न मुहम्मदन अ़ब्दुहू व रसूलुह।

मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं और मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद (सल्ल०) अल्लाह के बन्दे और

रसूल है।

यह शहादत देते वक़्त आप शहादत की उँगली उठाते हैं, क्योंकि यह नमाज़ में आपके अक़ीदे का एलान है और उसको ज़बान से अदा करते वक़्त ख़ास तौर पर ध्यान और ज़ोर देने की ज़रूरत है। इसके बाद आप दरूद पढ़ते हैं—

दरूद

اَللّٰهُمَّ صَلِّ عَلٰى سَيِّدِنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدٍ وَّعَلٰى آلِ مُحَمَّدٍ كَمَا صَلَّيْتَ عَلٰى اِبْرَاهِيْمَ وَعَلٰى آلِ اِبْرَاهِيْمَ اِنَّكَ حَمِيْدٌ مَّجِيْدٌ. اَللّٰهُمَّ بَارِكْ عَلٰى سَيِّدِنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدٍ وَّعَلٰى آلِ مُحَمَّدٍ كَمَا بَارَكْتَ عَلٰى اِبْرَاهِيْمَ وَعَلٰى آلِ اِبْرَاهِيْمَ اِنَّكَ حَمِيْدٌ مَّجِيْدٌ.

अल्लाहुम-म सल्लि अ़ला सय्यिदिना व मौलाना मुहम्मदिवँ, व अ़ला आलि मुहम्मदिन, कमा सल्लै-त अ़ला इबराही-म, व अ़ला आलि इबराही-म, इन्न-क हमीदुम्मजीद। अल्लाहुम-म बारिक अ़ला सय्यिदिना, व मौलाना मुहम्मदिवँ व अ़ला आलि मुहम्मदिन, कमा बारक-त अ़ला इबराही-म, व अ़ला आलि इबराही-म, इन्न-क हमीदुम्मजीद।

ख़ुदाया! रहमत फ़रमा हमारे सरदार और मौला मुहम्मद (सल्ल०) और उनकी आल पर, जिस तरह तूने रहमत फ़रमाई इबराहीम और आले इबराहीम पर, बेशक तू बेहतरीन ख़ूबियोंवाला और बुज़ुर्ग है। और ख़ुदाया! बरकत नाज़िल फ़रमा हमारे सरदार और मौला मुहम्मद (सल्ल०) और उनकी आल पर, जिस तरह तूने बरकत नाज़िल फ़रमाई इबराहीम आले इबराहीम पर, बेशक तू बेहतरीन ख़ूबियोंवाला और बुज़ुर्ग है।

यह दरूद पढ़ने के बाद आप अल्लाह से दुआ करते हैं—

दुआ

اَللّٰهُمَّ إِنِّىٓ اَعُوْذُبِكَ مِنْ عَذَابِ جَهَنَّمَ وَاَعُوْذُ بِكَ مِنْ عَذَابِ الْقَبْرِ وَاَعُوْذُبِكَ مِنْ فِتْنَةِ الْمَسِيْحِ الدَّجَّالِ وَاَعُوْذُ بِكَ مِنْ فِتْنَةِ الْمَحْيَا وَالْمَمَاتِ وَاَعُوْذُ بِكَ مِنَ الْمَأْثَمِ وَالْمَغْرَمِ ۞

अल्लाहुम-म इन्नी अऊज़ु बि-क मिन अज़ाबि जहन्न-म, व अऊज़ु बि-क मिन अज़ाबिल क़बरि, व अऊज़ु बि-क मिन फ़ित-नतिल मसीहिद-दज्जालि, व अऊज़ु बि-क मिन फ़ित-नतिल महया वल ममाति। व अऊज़ु बि-क मिनल मा-स-मि, वल मग़रम।

ख़ुदाया! मैं तेरी पनाह माँगता हूँ जहन्नम के अज़ाब से, और तेरी पनाह माँगता हूँ क़ब्र के अज़ाब से, और तेरी पनाह माँगता हूँ उस गुमराह करनेवाले दज्जाल के फ़ितने से जो ज़मीन पर छा जानेवाला है, और तेरी पनाह माँगता हूँ ज़िन्दगी और मौत के फ़ितने से। ख़ुदाया! मैं तेरी पनाह माँगता हूँ बुरे आमाल की ज़िम्मेदारी और क़र्ज़दारी से।

सलाम

यह दुआ पढ़ने के बाद आपकी नमाज़ पूरी हो गई। अब आप मालिक के दरबार से वापस होते हैं, और वापस होकर पहला काम क्या करते हैं? यह कि दाएँ और बाएँ मुड़कर तमाम हाज़िरीन और दुनिया की हर चीज़ के लिए सलामती और रहमत की दुआ करते हैं—

اَلسَّلَامُ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَةُ اللّٰهِ

अस्सलामु अलैकुम व रह्मतुल्लाह।

आपपर सलामती हो और अल्लाह की रहमत।

मानो, यह वह ख़ुशख़बरी है जो ख़ुदा के दरबार से पलटते हुए आप दुनिया के लिए लाए हैं।

यह है वह नमाज़ जो आप सुबह उठकर दुनिया के काम-काज में लगने

से पहले पढ़ते हैं। फिर कुछ घण्टे काम-काज में लगे रहने के बाद दोपहर को ख़ुदा के दरबार में हाज़िर होकर दोबारा यही नमाज़ अदा करते हैं। फिर कुछ घण्टों के बाद तीसरे पहर को फिर यही नमाज़ पढ़ते हैं। फिर कुछ घण्टे और मशग़ूल रहने के बाद शाम को इसी नमाज़ को दुहराते हैं। फिर दुनिया के कामों से छुट्टी पाकर सोने से पहले आख़िरी बार अपने मालिक के सामने जाते हैं। इस आख़िरी नमाज़ का ख़ात्मा वित्र पर होता है, जिसकी तीसरी रकअ्त में आप एक बहुत बड़ा इक़रारनामा अपने मालिक के सामने पेश करते हैं। यह दुआ-ए-क़ुनूत है। क़ुनूत के मानी हैं ख़ुदा के आगे ज़िल्लत व इनकिसारी, इताअत और बन्दगी का इक़रार। यह इक़रार आप किन लफ़्ज़ों में करते हैं ज़रा ध्यान से सुनिए:

दुआए क़ुनूत

اَللّٰهُمَّ إِنَّا نَسْتَعِيْنُكَ وَنَسْتَهْدِيْكَ وَنَسْتَغْفِرُكَ وَنُؤْمِنُ بِكَ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْكَ وَنُثْنِيْ عَلَيْكَ الْخَيْرَ كُلَّهٗ.

अल्लाहुम-म इन्ना नस्तईनु-क व नस्तहदी-क व नस्तग़फ़िरु-क व नुअ्मिनु बि-क व न-त-वक्कलु अ़लै-क व नुस्नी अ़लै-कल ख़ै-र कुल्लहू।

ख़ुदाया! हम तुझसे मदद माँगते हैं, तुझसे ही हिदायत माँगते हैं, तुझसे गुनाहों की माफ़ी चाहते हैं, तुझपर ईमान लाते हैं और तेरे ही ऊपर भरोसा करते हैं, और सारी तारीफ़ तेरे ही लिए ख़ास करते हैं।

نَشْكُرُكَ وَلَا نَكْفُرُكَ وَنَخْلَعُ وَنَتْرُكُ مَنْ يَّفْجُرُكَ.

व नशकुरु-क वला नकफ़ुरु-क व नख़्लउ़ व नतरुकु मय्यफ़्जुरु-क।

हम तेरा शुक्र अदा करते हैं, नाशुक्री नहीं करते। हम हर उस शख़्स को छोड़ देंगे और उससे ताल्लुक़ ख़त्म कर देंगे जो तेरा नाफ़रमान हो।

اَللّٰهُمَّ اِيَّاكَ نَعْبُدُ وَلَكَ نُصَلِّى وَنَسْجُدُ وَاِلَيْكَ نَسْعٰى وَنَحْفِدُ.

अल्लाहुम-म इय्या-क नअ़बुदु व ल-क नुसल्ली व नस्जुदु व इलै-क नसआ़ व नहफ़िदु।

ख़ुदाया, हम तेरी ही बन्दगी करते हैं और तेरे ही लिए नमाज़ पढ़ते और सज्दा करते हैं और हमारी सारी कोशिशें और सारी दौड़-धूप तेरी ही ख़ुशी के लिए है।

وَنَرْجُوْرَحْمَتَكَ وَنَخْشٰى عَذَابَكَ إِنَّ عَذَابَكَ بِالْكُفَّارِ مُلْحِقٌ

व नरजू रह-म-त-क व नख़शा अ़ज़ा-ब-क इन-न अ़ज़ा-ब-क बिल कुफ़्फ़ारि मुलहिक़।

और हम तेरी ही रहमत के उम्मीदवार हैं और तेरे अज़ाब से डरते हैं। बेशक तेरा सख़्त अज़ाब ऐसे लोगों पर पड़ेगा जो नाफ़रमान हैं।

नमाज़ और तामीरे सीरत

मुसलमान भाइयो! ज़रा सोचिए, जो शख़्स दिन में पाँच बार अज़ान की यह आवाज़ सुनता हो और समझता हो कि कितनी बड़ी चीज़ की शहादत दी जा रही है और कैसे ज़बरदस्त बादशाह के हुज़ूर में बुलाया जा रहा है, और जो शख़्स हर बार इस पुकार को सुनकर अपने सारे काम-काज छोड़ दे और उस पाक ज़ात की तरफ़ दौड़े, जिसे वह अपना और सारी कायनात का मालिक जानता है, और जो शख़्स हर नमाज़ से पहले अपने जिस्म और दिल को वुज़ू करके पाक करे, और जो शख़्स कई-कई बार नमाज़ में वे सारी बातें समझ-बूझकर अदा करे जो अभी आपके सामने मैंने बयान की हैं, तो कैसे मुमकिन है कि उसके दिल में ख़ुदा का ख़ौफ़ पैदा न हो? उसको ख़ुदा के हुक्मों के ख़िलाफ़ चलते हुए शर्म न आए? उसका दिल गुनाहों और बदकारियों के काले धब्बे लेकर बार-बार ख़ुदा के सामने हाज़िर होते हुए लरज़ न उठे? किस तरह मुमकिन है कि आदमी नमाज़ में ख़ुदा की बन्दगी का इक़रार और उसकी इताअत का इक़रार, उसके मालिके यौमिद्दीन होने का इक़रार करके जब अपने काम-काज की तरफ़ वापस आए तो झूठ बोले, बेईमानी करे, लोगों के हक़ मारे, रिश्वत

खाए और खिलाए, सूद खाए और खिलाए, ख़ुदा के बन्दों को दुख पहुँचाए, फ़हश और बेहयाई और बदकारी करे और फिर इन सब आमाल का बोझ लादकर दोबारा ख़ुदा के सामने हाज़िर होने और इन्हीं सब बातों का इक़रार करने की हिम्मत कर सके? हाँ, यह कैसे मुमकिन है कि आप जान-बूझकर ख़ुदा से छत्तीस बार इक़रार करें कि हम तेरी ही बन्दगी करते हैं और तुझ ही से मदद माँगते हैं और फिर ख़ुदा के सिवा दूसरों की बन्दगी करें और दूसरों के आगे मदद के लिए हाथ फैलाएँ। एक बार आप इक़रार करके उसके ख़िलाफ़ चलेंगे तो दूसरी बार ख़ुदा के दरबार में जाते हुए आपका ज़मीर मलामत करेगा और शर्मिन्दगी पैदा होगी, दूसरी बार फिर ख़िलाफ़ चलेंगे तो और ज़्यादा शर्म आएगी, और ज़्यादा दिल अन्दर से लानत भेजेगा। सारी उम्र यह कैसे हो सकता है कि रोज़ाना पाँच-पाँच बार नमाज़ पढ़ें और फिर भी आपके आमाल न सुधरें, आपके अख़लाक़ की इसलाह न हो और आपकी ज़िन्दगी की काया न पलटे? इसी लिए अल्लाह तआला ने नमाज़ की यह ख़ासियत बयान की है—

إِنَّ الصَّلٰوةَ تَنْهٰى عَنِ الْفَحْشَاءِ وَالْمُنْكَرِ

बेशक नमाज़ आदमी को बेहयाई और बदकारी से रोकती है।

लेकिन अगर कोई ऐसा है कि इतनी ज़बरदस्त इसलाह करनेवाली चीज़ से भी उसकी इसलाह नहीं होती तो यह उसके स्वभाव की ख़राबी है, नमाज़ की ख़राबी नहीं। पानी और साबुन की ख़ूबी मैल को साफ़ करना है, लेकिन अगर कोयले की स्याही इससे दूर न हो तो यह पानी और साबुन का क़सूर नहीं, इसकी वजह कोयले की अपनी स्याही है।

भाइयो! आपकी नमाज़ों में एक बहुत बड़ी कमी है, और वह यह है कि आप नमाज़ में जो कुछ पढ़ते हैं, उसको समझते नहीं। अगर आप थोड़ा-सा वक़्त लगाएँ तो इन सारी दुआओं का मतलब अपनी ज़बान में याद कर सकते हैं। इससे यह फ़ायदा होगा कि आप जो कुछ पढ़ेंगे, उसे समझते भी जाएँगे।

नमाज़ जमाअत के साथ

मुसलमान भाइयो! पिछले ख़ुतबे में तो मैंने आपके सामने सिर्फ़ नमाज़ के फ़ायदे बयान किए थे, जिनसे आपको अन्दाज़ा हो चुका होगा कि यह इबादत अपनी जगह पर कैसी ज़बरदस्त चीज़ है, किस तरह आदमी में बन्दगी का कमाल पैदा करती है और किस तरह उसको बन्दगी का हक़ अदा करने के क़ाबिल बनाती है। अब मैं आपको जमाअत से नमाज़ पढ़ने के फ़ायदे बताना चाहता हूँ, जिन्हें सुनकर आप अन्दाज़ा करेंगे कि अल्लाह तआला ने अपनी मेहरबानी से किस तरह एक ही चीज़ में हमारे लिए सारी नेमतें इकट्ठा कर दी हैं। अव्वल तो नमाज़ ख़ुद ही क्या कम थी कि इसके साथ जमाअत का हुक्म देकर इसकी अहमियत और बढ़ा दी गई और इसके अन्दर वह ताक़त भर दी गई है जो इनसान की काया पलट देने में अपना जवाब नहीं रखती।

नमाज़ किन ख़ूबियों को पैदा करती है?

मैं पहले आप से यह कह चुका हूँ कि ज़िन्दगी में हर वक़्त अपने आपको ख़ुदा का बन्दा समझना, फ़रमाँबरदार ग़ुलाम की तरह मालिक की मरज़ी का ताबेदार बनकर रहना और मालिक का हुक्म पूरा करने के लिए हर वक़्त तैयार रहना असली इबादत है और नमाज़ इसी इबादत के लिए इनसान को तैयार करती है। यह भी आपको बता चुका हूँ कि इस इबादत के लिए इनसान में जितनी ख़ूबियों की ज़रूरत है वे सब नमाज़ पैदा करती है। बन्दगी का एहसास, ख़ुदा और उसके रसूल (सल्ल०) और उसकी किताब पर ईमान, आख़िरत का यक़ीन, ख़ुदा का ख़ौफ़, ख़ुदा को ग़ैब की ख़बर रखनेवाला समझना और उसको हर वक़्त अपने से क़रीब समझना, ख़ुदा की फ़रमाँबरदारी के लिए हर हालत में तैयार रहना, ख़ुदा के हुक्मों से वाक़िफ़ होना, ये और ऐसी ही तमाम ख़ूबियाँ 'नमाज़' आदमी के अन्दर पैदा कर देती है जो उसको सही मानों में ख़ुदा का बन्दा बनाने के लिए ज़रूरी हैं।

मुकम्मल बन्दगी तन्हा मुमकिन नहीं

मगर आप ज़रा ग़ौर से देखें तो आपको मालूम हो जाएगा कि इनसान अपनी जगह चाहे वह कितना ही कामिल हो, वह ख़ुदा की बन्दगी का हक़्क़ अदा नहीं कर सकता जब तक कि दूसरे बन्दे भी उसके मददगार न हों। ख़ुदा के तमाम हुक्मों को पूरा नहीं कर सकता जब तक कि वे बहुत-से लोग, जिनके साथ रात-दिन उसका रहना-सहना है, जिनसे हर वक़्त उसको मामला पेश आता है, इस फ़रमाँबरदारी में उसका साथ न दें। आदमी दुनिया में अकेला तो पैदा नहीं हुआ है, न ही अकेला रहकर कोई काम कर सकता है। उसकी सारी ज़िन्दगी अपने भाई-बंधुओं, दोस्तों और पड़ोसियों, मामलादारों और ज़िन्दगी के बेशुमार साथियों से हज़ारों क़िस्म के ताल्लुक़ात में जकड़ी हुई है। अल्लाह के अहकाम भी तनहा एक आदमी के लिए नहीं हैं, बल्कि इन्हीं ताल्लुक़ात को ठीक करने के लिए हैं। अब अगर ये सब लोग ख़ुदा के हुक्म बजा लाने में एक-दूसरे का साथ दें और एक-दूसरे की मदद करें तो सब फ़रमाँबरदार बन्दे बन सकते हैं। और अगर सब नाफ़रमानी पर तुले हुए हों या उनके ताल्लुक़ात इस क़िस्म के हों कि ख़ुदा के हुक्म बजा लाने में एक-दूसरे की मदद न करें तो एक अकेले आदमी के लिए नामुमकिन है कि वह अपनी ज़िन्दगी में ख़ुदा के क़ानून पर ठीक-ठीक अमल कर सके।

तन्हा शैतान का मुक़ाबला मुमकिन नहीं

इसके साथ जब आप क़ुरआन को ग़ौर से पढ़ेंगे तो आपको मालूम होगा कि ख़ुदा का हुक्म सिर्फ़ यही नहीं है कि आप ख़ुद अल्लाह के फ़रमाँबरदार बन्दे बनें, बल्कि साथ-साथ यह हुक्म भी है कि दुनिया को ख़ुदा का ताबेअ् और फ़रमाँबरदार बनाएँ, दुनिया में ख़ुदा के क़ानून को फैलाएँ और जारी करें। शैतान का क़ानून जहाँ-जहाँ चल रहा हो, उसको मिटा दें और उसकी जगह 'अल्लाह वह्दहू ला शरी-क लहू' के क़ानून की हुकूमत क़ायम करें। यह ज़बरदस्त ख़िदमत जो अल्लाह ने आपके सुपुर्द की है, उसको एक अकेला मुसलमान अंजाम नहीं दे सकता। और अगर करोड़ों मुसलमान भी हों, मगर अलग-अलग रह कर कोशिश करें, तब भी वे शैतान के बन्दों

की एक मुनज़्ज़म ताक़त को नीचा नहीं दिखा सकते। इसके लिए ज़रूरत है कि मुसलमान एक जत्था बनें, एक-दूसरे के मददगार हों, एक-दूसरे के मुहाफ़िज़ बन जाएँ और सब मिलकर एक ही मक़सद के लिए कोशिश करें।

हुक्म की इताअत मतलूब है

फिर ज़्यादा गहरी नज़र से जब आप देखेंगे तो यह बात आपपर खुलेगी कि इतने बड़े मक़सद के लिए सिर्फ़ मुसलमानों का मिल जाना ही काफ़ी नहीं है, बल्कि इसकी भी ज़रूरत है कि यह मिल जाना बिलकुल ठीक तरीक़े पर हो, यानी मुसलमानों की जमाअत इस तरह बने कि एक-दूसरे के साथ उनके ताल्लुक़ात ठीक-ठीक जैसे होने चाहिएँ वैसे ही हों, उनके आपस के ताल्लुक़ में कोई ख़राबी न रहने पाए। उनमें पूरी एकता हो। वे एक सरदार की इताअत करें। उसके हुक्म पर हरकत करने की आदत उनमें पैदा हो और वे यह भी समझ लें कि अपने सरदार की फ़रमाँबरदारी उन्हें किस तरह और कहाँ तक करनी चाहिए और नाफ़रमानी के मौक़े कौन-कौन से हैं।

नमाज़ बाजमाअत के फ़ायदे

इन सब बातों को नज़र में रखकर देखिए कि नमाज़ बाजमाअत किस तरह ये सारे काम करती है।

एक आवाज़ पर इकट्ठा होना

हुक्म है कि अज़ान की आवाज़ सुनकर अपने तमाम काम छोड़ दो और मसजिद की तरफ़ आ जाओ। यह बुलावे की पुकार सुनकर हर तरफ़ से मुसलमानों का उठना और एक मरकज़ पर जमा हो जाना उनके अन्दर वही कैफ़ियत पैदा करता है जो फ़ौज की होती है। फ़ौजी सिपाही जहाँ-जहाँ भी हों, बिगुल की आवाज़ सुनते ही समझ लेते हैं कि हमारा कमाण्डर बुला रहा है। इस पुकार पर सबके दिल में एक ही कैफ़ियत पैदा होती है, यानी कमाण्डर के हुक्म की पैरवी का ख़याल और इस ख़याल के मुताबिक़

सब एक ही काम करते हैं, यानी अपनी-अपनी जगह से उस आवाज़ पर दौड़ पड़ते हैं और हर तरफ़ से सिमटकर एक जगह इकट्ठा हो जाते हैं। फ़ौज में यह तरीक़ा किस लिए अपनाया गया है? इसी लिए कि अव्वल तो हर-हर सिपाही में अलग-अलग हुक्म मानने और उसपर मुस्तैदी के साथ अमल करने की ख़ूबी और आदत पैदा हो और फिर साथ ही साथ ऐसे तमाम फ़रमाँबरदार सिपाही मिलकर एक गिरोह, एक जत्था, एक टीम भी बन जाएँ और उनमें यह आदत भी पैदा हो जाए कि कमाण्डर के हुक्म पर एक ही वक़्त में एक ही जगह सब इकट्ठा हो जाया करें, ताकि जब कोई मुहिम पेश आए तो सारी फ़ौज एक आवाज़ पर एक मक़सद के लिए इकट्ठी होकर काम कर सके। ऐसा न हो कि सारे सिपाही अपनी-अपनी जगह तो बड़े तीसमार ख़ाँ हों, मगर जब काम के मौक़े पर उनको पुकारा जाए तो वे जमा होकर न लड़ सकें, बल्कि हर एक अपनी-अपनी मर्ज़ी के मुताबिक़ जिधर चाहे चला जाए। ऐसी हालत अगर किसी फ़ौज की हो तो उसके हज़ार बहादुर सिपाहियों को दुशमन के पचास सिपाहियों का एक दस्ता अलग-अलग पकड़ के ख़त्म कर सकता है। बस इसी बुनियाद पर मुसलमानों के लिए भी यह क़ायदा मुक़र्रर किया गया है कि जो मुसलमान जहाँ अज़ान की आवाज़ सुने, सब काम-काज छोड़कर अपने क़रीब की मसजिद का रुख़ करे; ताकि सब मुसलमान मिलकर अल्लाह की फ़ौज बन जाएँ। इस तरह इकट्ठे होने की मश्क़ उनको रोज़ाना पाँच वक़्त कराई जाती है, क्योंकि दुनिया की सारी फ़ौजों से बढ़कर कड़ी ड्यूटी इस ख़ुदाई फ़ौज की है। दूसरी फ़ौजों के लिए तो मुद्दतों में कभी एक मुहिम पेश आती है और इसकी ख़ातिर उनको सारी फ़ौजी मश्क़ें कराई जाती हैं। मगर ख़ुदाई फ़ौज को हर वक़्त शैतानी ताक़तों से लड़ना है और हर वक़्त अपने कमाण्डर के हुक्मों को पूरा करना है, इसलिए इसके साथ यह भी बहुत बड़ी रिआयत है कि इसे रोज़ाना सिर्फ़ पाँच बार ख़ुदाई बिगुल की आवाज़ पर दौड़ने और ख़ुदाई छावनी यानी मसजिद में इकट्ठा होने का हुक्म दिया गया है।

बामक़सद इजतिमा

यह तो सिर्फ़ अज़ान का फ़ायदा था। अब आप मसजिद में जमा होते हैं, और सिर्फ़ इस जमा होने में बेशुमार फ़ायदे हैं। यहाँ जो आप इकट्ठा

हुए तो आपने एक-दूसरे को देखा, पहचाना, एक-दूसरे से वाक़िफ़ हुए। यह देखना, पहचानना, वाक़िफ़ होना किस हैसियत से है? इस हैसियत से कि आप सब ख़ुदा के बन्दे हैं, एक रसूल (सल्ल०) के पैरौ हैं, एक किताब के माननेवाले हैं और एक ही मक़सद आप सबकी ज़िन्दगी का मक़सद है। इसी एक मक़सद को पूरा करने के लिए आप यहाँ इकट्ठा हुए हैं और इसी मक़सद को यहाँ से वापस जाकर भी आपको पूरा करना है। इस क़िस्म की आशनाई, इस क़िस्म की वाक़फ़ियत आप में ख़ुद-बख़ुद यह ख़याल पैदा कर देती है कि आप सब एक जमाअत, एक गिरोह और एक पार्टी हैं, एक ही फ़ौज के सिपाही हैं, एक-दूसरे के भाई हैं। दुनिया में आपके मक़सद, आपके नुक़सान और आपके फ़ायदे एक ही हैं और आपकी ज़िन्दगियाँ एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं।

आपसी हमदर्दी

फिर आप जो एक-दूसरे को देखेंगे, तो ज़ाहिर है कि आँखें खोलकर ही देखेंगे और यह देखना भी दुशमन का दुशमन को देखना नहीं, बल्कि दोस्त को दोस्त का और भाई को भाई का देखना होगा। इस नज़र से जब आप देखेंगे कि मेरा कोई भाई फटे-पुराने कपड़ों में है, कोई परेशान हाल है, कोई भूखा है, कोई मजबूर है, कोई लंगड़ा-लूला या अन्धा है तो ज़रूर ही आपके दिल में हमदर्दी पैदा होगी। आपमें से जो ख़ुशहाल हैं वे ग़रीबों और मजबूरों पर रहम खाएँगे। जो बदहाल हैं उन्हें अमीरों तक पहुँचने और उनसे अपना हाल कहने की हिम्मत पैदा होगी। किसी के बारे में मालूम होगा कि वह बीमार है या किसी मुसीबत में फँस गया है इसलिए मसजिद में नहीं आया तो उसकी बीमारपुर्सी को जाने का ख़याल पैदा होगा। किसी के मरने की ख़बर मिली तो सब मिलकर उसके लिए नमाज़े जनाज़ा पढ़ेंगे और ग़म के मारे रिश्तेदारों के ग़म में शरीक होंगे। ये सब बातें आपके आपसी मुहब्बत को बढ़ानेवाली और एक-दूसरे का मददगार बनानेवाली हैं।

पाक मक़सद के लिए जमा होना

इसके बाद और ज़रा ग़ौर कीजिए। यहाँ जो आप इकट्ठा हुए हैं तो

एक पाक जगह और पाक मक़सद के लिए इकट्ठा हुए हैं। यह चोरों, शराबियों और जुआरियों की भीड़ नहीं है कि सबके दिल में नापाक इरादे भरे हुए हों। यह तो अल्लाह के बन्दों का इजतिमा है। अल्लाह की इबादत के लिए, अल्लाह के घर में, सब अपने ख़ुदा के सामने बन्दगी का इक़रार करने हाज़िर हुए हैं। ऐसे मौक़े पर पहले तो ईमानदार आदमी ख़ुद ही अपने गुनाहों पर शरमिन्दा होता है, लेकिन अगर उसने कोई गुनाह अपने दूसरे भाई के सामने किया था और वह ख़ुद भी यहाँ मसजिद में मौजूद है, तो सिर्फ़ उसकी निगाहों का सामना हो जाना ही उसके लिए काफ़ी है कि गुनाहगार अपने दिल में कट-कट जाए और अगर कहीं मुसलमानों में एक-दूसरे को नसीहत करने का जज़्बा भी मौजूद हो और वे जानते हों कि हमदर्दी व मुहब्बत के साथ एक-दूसरे की इसलाह किस तरह करनी चाहिए, तो यक़ीन जानिए कि यह इजतिमा बड़ी ही रहमत व बरकत का सबब बनेगा। इस तरह सब मुसलमान मिलकर एक-दूसरे की ख़राबियों को दूर करेंगे, एक-दूसरे की कमियों को पूरी करेंगे और पूरी जमाअत नेक और भले लोगों की जमाअत बनती चली जाएगी।

बिरादरी (भाईचारा)

ये सिर्फ़ मसजिद में इकट्ठा होने की बरकतें हैं। इसके बाद यह देखिए कि जमाअत के साथ नमाज़ अदा करने में कितनी बरकतें छिपी हुई हैं। आप सब एक सफ़ (लाइन) में एक-दूसरे के बराबर खड़े होते हैं। न कोई बड़ा है, न छोटा। न कोई ऊँचा है, और न कोई नीचा। ख़ुदा के दरबार में ख़ुदा के सामने सब बराबर हैं। किसी का हाथ लगने और किसी को छू जाने से कोई नापाक नहीं होता। सब पाक हैं इसलिए कि सब इनसान हैं, एक ख़ुदा के बन्दे हैं और एक ही दीन के माननेवाले हैं। आपमें ख़ानदानों और क़बीलों और मुल्कों और ज़बानों का भी कोई फ़र्क़ नहीं। कोई सैयद है, कोई पठान है, कोई राजपूत है, कोई जाट है। कोई किसी मुल्क का रहनेवाला है, कोई किसी मुल्क का। किसी की ज़बान कुछ है और किसी की कुछ। मगर सब एक सफ़ में खड़े एक ख़ुदा की इबादत कर रहे हैं। इसका मतलब यह है कि सब एक क़ौम हैं। यह हसब, नसब, बिरादरियों और क़ौमों का बँटवारा सब झूठा है। सबसे बड़ा रिश्ता आपके बीच ख़ुदा

की बन्दगी और इबादत का रिश्ता है। इसमें जब आप सब एक हैं, तो फिर किसी मामले में भी क्यों अलग हों?

हरकतों में यकसानियत

फिर जब आप एक सफ़ में कंधे से कंधा मिलाकर खड़े होते हैं तो यह मालूम होता है कि एक फ़ौज अपने बादशाह के सामने ख़िदमत के लिए खड़ी है। सफ़ बाँधकर खड़े होने और मिलकर एक साथ हरकत करने से आपके दिलों में एकता पैदा होती है। आपको यह मश्क़ कराई जाती है कि ख़ुदा की बन्दगी में इस तरह एक हो जाओ कि सबके हाथ एक साथ उठें और सबके पाँव एक साथ चलें, मानो आप दस-बीस या सौ या हज़ार आदमी नहीं हैं, बल्कि मिलकर एक आदमी की तरह बन गए हैं।

दुआएँ

इस जमाअत और इस सफ़बन्दी के बाद आप क्या करते हैं? एक ज़बान होकर अपने मालिक से यह अर्ज़ करते हैं—

إِيَّاكَ نَعْبُدُ وَإِيَّاكَ نَسْتَعِيْنُ○

इय्या-क नअ़बुदु व इय्याक-क नसत ईन।

हम सब तेरी ही इबादत करते हैं और तुझ ही से मदद माँगते हैं।

اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ○

इहदिनस्सिरातल मुसतक़ीम।

हम सबको सीधे रास्ते पर चला।

رَبَّنَا لَكَ الْحَمْدُ

रब्बना लकल हम्द।

हमारे परवरदिगार! तेरे ही लिए तारीफ़ें हैं।

اَلسَّلَامُ عَلَيْنَا وَعَلٰى عِبَادِ اللّٰهِ الصَّالِحِيْنَ.

अस्सलामु अ़लैना व अ़ला इबादिल्लाहिस्सालिहीन।

हम सबपर सलामती हो और अल्लाह के तमाम नेकबन्दों पर।

फिर नमाज़ ख़त्म करके आप एक-दूसरे के लिए सलामती और रहमत की दुआ करते हैं—

اَلسَّلَامُ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَةُ اللّٰهِ.

अस्सलामु अलैकुम व रहमतुल्लाह।

इसका मतलब यह हुआ कि आप सब एक-दूसरे की भलाई चाहनेवाले हैं, सब मिलकर एक ही मालिक से सबकी भलाई के लिए दुआ करते हैं। आप अकेले-अकेले नहीं हैं, आपमें से कोई भी अकेला सब कुछ अपने ही लिए नहीं माँगता, बल्कि हर एक की यही दुआ है कि सबपर ख़ुदा का फ़ज़्ल हो, सबको एक ही सीधे रास्ते पर चलने की तौफ़ीक़ बख़्शी जाए और सब ख़ुदा की सलामती में शामिल हों। इस तरह यह नमाज़ आपके दिलों को जोड़ती है। आपके विचारों में एकता पैदा करती है और आप में एक-दूसरे की भलाई चाहने का जज़्बा पैदा करती है।

इमाम के बिना जमाअत नहीं

मगर देख लीजिए कि जमाअत की नमाज़ आप कभी इमाम के बिना नहीं पढ़ते। दो आदमी भी मिलकर पढ़ेंगे तो एक इमाम होगा और दूसरा मुक़्तदी। जमाअत खड़ी हो जाए तो उससे अलग होकर नमाज़ पढ़ने से सख़्ती के साथ रोका गया है, बल्कि ऐसी नमाज़ होती ही नहीं। हुक्म है कि जो आता जाए उसी इमाम के पीछे नमाज़ में शरीक होता जाए। ये सब चीज़ें सिर्फ़ नमाज़ ही के लिए नहीं हैं, बल्कि दरअसल इनमें आपको यह सबक़ दिया गया है कि मुसलमान की हैसियत से अगर ज़िन्दगी बसर करनी है तो इसी तरह जमाअत बनकर रहो। तुम्हारी जमाअत, जमाअत ही नहीं हो सकती जब तक कि तुम्हारा कोई इमाम न हो और जमाअत जब बन जाए तो उससे अलग होने का मतलब यह है कि तुम्हारी ज़िन्दगी मुसलमानों की ज़िन्दगी नहीं रही।

इमामत की नौईयत और हक़ीक़त

सिर्फ़ इसी पर बस नहीं किया गया है, बल्कि जमाअत में इमाम और

मुक़्तदियों का ताल्लुक़ इस तौर पर क़ायम किया गया, जिससे आपको मालूम हो जाए कि इस छोटी मसजिद के बाहर उस बहुत बड़ी मसजिद में जिसका नाम 'ज़मीन' है, आपके इमाम की हैसियत क्या है? उसके फ़राइज़ क्या हैं, उसके हुक़ूक़ क्या हैं? आपको किस तरह उसकी इताअत करनी चाहिए और किन बातों में करनी चाहिए? अगर वह ग़लती करे तो आप क्या करें, कहाँ तक आपको ग़लती में भी उसकी पैरवी करनी चाहिए, कहाँ आप उसको टोकने के हक़दार हैं? कहाँ आप उससे मुतालबा कर सकते हैं कि अपनी ग़लती का सुधार करे और किस मौक़े पर आप उसको इमामत से हटा सकते हैं? ये सब मानो छोटे पैमाने पर एक बड़ी सल्तनत को चलाने की मश्क़ है, जो हर रोज़ पाँच बार आपसे हर छोटी-बड़ी मसजिद में कराई जाती है।

इमामत की शर्तें और आदाब

यहाँ इतना मौक़ा नहीं कि मैं इन सारी तफ़सीलों को बयान करूँ, मगर कुछ मोटी-मोटी बातें बयान करता हूँ।

(1) मुत्तक़ी व परहेज़गार

हुक्म है कि इमाम ऐसे शख़्स को बनाया जाए जो परहेज़गार हो, इल्म में ज़्यादा हो, क़ुरआन ज़्यादा जानता हो और ज़्यादा उम्र का भी हो। हदीस में तरतीब भी बता दी गई है कि इन सिफ़ात में कौन-सी सिफ़त किस सिफ़त पर मुक़द्दम है। यहीं से यह तालीम भी दे दी गई कि क़ौम के सरदार के चुनाव में किन बातों पर ध्यान देना चाहिए।

(2) अकसरीयत का नुमाइंदा

हुक्म है कि इमाम ऐसा आदमी न हो, जिससे जमाअत की बड़ी तादाद नाराज़ हो। यूँ तो थोड़े-बहुत मुख़ालिफ़ किसके नहीं होते, लेकिन जमाअत में अक्सर लोग किसी शख़्स से नफ़रत रखते हों तो उसे इमाम न बनाया जाए। यहाँ फिर क़ौम के सरदार के चुनाव का एक क़ायदा बता दिया गया।

(3) मुक़तदियों का हमदर्द

हुक्म है कि जो आदमी जमाअत का इमाम बनाया जाए वह नमाज़ ऐसी पढ़ाए कि जमाअत के बूढ़े-से-बूढ़े लोगों को भी तकलीफ़ न हो।

सिर्फ़ जवान, मज़बूत, तन्दुरुस्त और फ़ुर्सतवाले लोगों को ही सामने रखकर लम्बी-लम्बी क़िरअत और लम्बे-लम्बे रुकू और सजदे न करने लगे। बल्कि यह भी देखे कि जमाअत में बूढ़े भी हैं, बीमार भी हैं, कमज़ोर भी हैं और ऐसे मशग़ूल भी हैं जो जल्दी नमाज़ पढ़कर अपने काम पर वापस जाना चाहते हैं। नबी (सल्ल०) ने इस सिलसिले में यहाँ तक रहम और शफ़क़त का नमूना पेश फ़रमाया है कि नमाज़ पढ़ाते वक़्त किसी बच्चे के रोने की आवाज़ आ जाती तो नमाज़ मुख़्तसर कर देते थे, ताकि अगर बच्चे की माँ जमाअत में शरीक हो तो उसे तक़लीफ़ न हो। यह गोया क़ौम के सरदार को तालीम दी गई है कि जब वह सरदार बनाया जाए तो क़ौम के अन्दर उसका तर्ज़े अमल कैसा होना चाहिए।

(4) मजबूरी में जगह ख़ाली कर दे

हुक्म है कि इमाम को अगर नमाज़ पढ़ाते वक़्त कोई ऐसी बात पेश आ जाए जिसकी वजह से वह नमाज़ पढ़ाने के क़ाबिल न रहे तो फ़ौरन हट जाए और अपनी जगह पर पीछे के आदमी को खड़ा कर दे। इसका मतलब यह है कि क़ौम के सरदार का भी यही फ़र्ज़ है कि जब वह सरदारी के क़ाबिल अपने आप को न पाए तो उसे ख़ुद हट जाना चाहिए और दूसरे ज़्यादा क़ाबिल आदमी के लिए जगह ख़ाली कर देनी चाहिए। इसमें न शर्म का कुछ काम है, न ख़ुदग़र्ज़ी का।

(5) इमाम की मुकम्मल इताअत

हुक्म है कि इमाम के कामों की सख़्ती के साथ पाबन्दी करो। उसकी हरकत से पहले हरकत करने को सख़्ती के साथ मना किया गया है; यहाँ तक कि जो शख़्स इमाम से पहले रुकू या सजदे में आ जाए, उसके बारे में हदीस में आया है कि वह गधे की सूरत में उठाया जाएगा। यहाँ गोया क़ौम को सिखाया गया है कि उसे अपने सरदार की इताअत किस तरह करनी चाहिए।

(6) ग़लती पर तंबीह

इमाम अगर नमाज़ में ग़लती करे, मिसाल के तौर पर जहाँ उसे बैठना चाहिए था वहाँ खड़ा हो जाए, या जहाँ खड़ा होना चाहिए था वहाँ बैठ जाए तो हुक्म है कि 'सुब्हानल्लाह' कहकर उसे ग़लती पर चौकस कर

दो। सुब्हानल्लाह का मतलब होता है ''अल्लाह पाक है''। इमाम की ग़लती पर सुब्हानल्लाह कहने का मतलब यह हुआ कि ग़लती से तो सिर्फ़ अल्लाह ही पाक है, तुम इनसान हो, तुमसे भूल-चूक हो जाना कोई ताज्जुब की बात नहीं। यह तरीक़ा है इमाम को टोकने का और जब इस तरह उसे टोका जाए तो उसपर लाज़िम है कि बिना किसी शर्म व लिहाज़ के अपनी ग़लती का सुधार करे, अलबत्ता अगर टोके जाने के बाद भी इमाम को यक़ीन हो कि उसने सही काम किया है तो वह अपने यक़ीन के मुताबिक़ अमल कर सकता है और इस सूरत में जमाअत का काम यह है कि इस अमल को ग़लत जानने के बाद भी उसका साथ दे। नमाज़ ख़त्म होने के बाद मुक़्तदी हक़ रखते हैं कि इमाम पर उसकी ग़लती साबित करें और नमाज़ दुबारा पढ़ाने की उससे माँग करें।

(7) बड़ी ग़लती और गुनाह में इताअत नहीं

इमाम के साथ जमाअत का यह बरताव सिर्फ़ उन हालतों के लिए है जब कि ग़लती छोटी-छोटी बातों में हो। लेकिन अगर इमाम नबी (सल्ल०) की सुन्नत के ख़िलाफ़ नमाज़ की तरकीब बदल दे या नमाज़ में क़ुरआन को जान-बूझकर ग़लत पढ़े या नमाज़ पढ़ाते हुए कुफ़्र या शिर्क या खुला गुनाह करे तो जमाअत का फ़र्ज़ है कि उसी वक़्त नमाज़ तोड़कर इमाम से अलग हो जाए। ये सब हिदायतें ऐसी हैं जिनमें पूरी तालीम दे दी गई है कि तुमको अपनी क़ौमी ज़िन्दगी में अपने सरदार के साथ किस तरह पेश आना चाहिए।

मुसलमान भाइयो! ये फ़ायदे जो मैंने नमाज़ बाजमाअत के बयान किए हैं, उनसे आपने अन्दाज़ा किया होगा कि अल्लाह तआला ने इस एक इबादत में जो दिन भर में पाँच बार सिर्फ़ कुछ मिनट के लिए अदा की जाती है, किस तरह दुनिया व आख़िरत की तमाम भलाइयाँ आपके लिए जमा कर दी हैं, किस तरह यही एक चीज़ आपको तमाम सआदतों से मालामाल कर देती है और किस तरह यह आपको अल्लाह की ग़ुलामी और दुनिया की हुक्मरानी के लिए तैयार करती है। अब आप ज़रूर सवाल करेंगे कि जब नमाज़ ऐसी चीज़ है तो जो फ़ायदे तुम इसके बयान करते हो, ये हासिल क्यों नहीं होते? इसका जवाब अगर अल्लाह ने चाहा तो अगले ख़ुतबे में दिया जाएगा।

नमाज़ें बेअसर क्यों हो गईं ?

मुसलमान भाइयो! आज के ख़ुतबे में मुझे आपको यह बताना है कि जिस नमाज़ के इतने ज़्यादा फ़ायदे मैंने कई ख़ुतबों में लगातार आपके सामने बयान किए हैं, वह अब क्यों वे फ़ायदे नहीं दे रही है? क्या बात है कि आप नमाज़ें पढ़ते हैं और फिर भी आपकी ज़िन्दगी नहीं सुधरती? फिर भी आपके अख़लाक़ पाकीज़ा नहीं होते? फिर भी आप एक ज़बरदस्त ख़ुदाई फ़ौज नहीं बनते? फिर भी बातिलपरस्त आपपर ग़ालिब हैं? फिर भी आप दुनिया में तबाह हाल और बुरी दशा में हैं।

इस सवाल का मुख़तसर जवाब तो यह हो सकता है कि अव्वल तो आप नमाज़ पढ़ते ही नहीं और पढ़ते भी हैं, तो उस तरीक़े से नहीं जो ख़ुदा और रसूल (सल्ल०) ने बताया है। इसी लिए उन फ़ायदों की उम्मीद आप नहीं कर सकते जो मोमिन को मेराजे कमाल तक पहुँचानेवाली नमाज़ से पहुँचने चाहिएँ। लेकिन मैं जानता हूँ कि सिर्फ़ इतना-सा जवाब आपको मुतमइन नहीं कर सकता। इसलिए ज़रा तफ़सील के साथ आपको यह बात समझाऊँगा।

एक मिसाल — घड़ी

किसी घड़ी को ले लीजिए, आपको नज़र आएगा कि उसमें बहुत-से पुर्ज़े एक-दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं। जब उसको कूक (चाबी) दी जाती है तो सब पुर्ज़े अपना-अपना काम शुरू कर देते हैं और उनके हरकत करने के साथ ही बाहर के सफ़ेद तख़्ते (डायल) पर उनकी हरकत का नतीजा ज़ाहिर होना शुरू हो जाता है, यानी घड़ी की सुइयाँ चलकर एक-एक सेकेण्ड और एक-एक मिनट बताने लगती हैं। अब आप ज़रा ग़ौर से देखिए। घड़ी बनाने का मक़सद यह है कि वह सही वक़्त बताएं। इसी मक़सद के लिए उसकी मशीन में वे सब पुर्ज़े इकट्ठा किए गए जो सही वक़्त बताने के लिए ज़रूरी थे। फिर इन सबको इस तरह जोड़ा गया कि सब मिलकर

बाक़ायदा हरकत करें और हर पुर्ज़ा वही काम और उतना ही काम करता चला जाए जितना सही वक़्त बताने के लिए उसको करना चाहिए। फिर कूक (चाबी) देने का क़ायदा मुक़र्रर किया गया, ताकि उन पुर्ज़ों को ठहरने न दिया जाए और थोड़ी-थोड़ी मुद्दत के बाद उनको हरकत दी जाती रहे। इसी तरह जब तमाम पुर्ज़ों को ठीक-ठीक जोड़ा गया और कूक दी गई तब कहीं घड़ी इस क़ाबिल हुई कि वह उस मक़सद को पूरा करे, जिसके लिए वह बनाई गई है। अगर आप उसे कूक न दें तो वह वक़्त नहीं बताएगी। अगर आप कूक दें; लेकिन उस क़ायदे के मुताबिक़ न दें जो कूक देने के लिए मुक़र्रर किया गया है तो वह बन्द हो जाएगी या चलेगी भी तो सही वक़्त न बताएगी। अगर आप उसके कुछ पुर्ज़े निकाल डालें और फिर कूक दें, तो उस कूक से कुछ हासिल न होगा। अगर आप उसके कुछ पुर्ज़ों को निकालकर उसकी जगह सिलाई मशीन के पुर्ज़े लगा दें और फिर कूक दें तो वह न वक़्त बताएगी और न कपड़ा सिएगी। अगर आप उसके सारे पुर्ज़े उसके अन्दर ही रहने दें लेकिन उनको खोलकर एक-दूसरे से अलग कर दें तो कूक देने से कोई पुर्ज़ा भी हरकत न करेगा। कहने को सारे पुर्ज़े उसके अन्दर मौजूद होंगे; मगर सिर्फ़ पुर्ज़ों के मौजूद रहने से वह मक़सद हासिल न होगा, जिसके लिए घड़ी बनाई गई है। क्योंकि उनकी तरतीब और उनका आपस का ताल्लुक़ आपने तोड़ दिया है जिसके कारण वे मिलकर हरकत नहीं कर सकते। ये सब सूरतें जो मैंने आपसे बयान की हैं, उनमें अगरचे घड़ी का होना और उसको कूक देने का काम दोनों बेकार हो जाते हैं, लेकिन दूर से देखनेवाला यह नहीं कह सकता कि यह घड़ी नहीं है या आप कूक नहीं दे रहे हैं। वह तो यही कहेगा कि सूरत तो बिलकुल घड़ी जैसी है और यही उम्मीद करेगा कि घड़ी का जो फ़ायदा है, वह उससे हासिल होना चाहिए। इसी तरह दूर से जब वह आपको कूक देते हुए देखेगा तो यही समझेगा कि आप वाक़ई घड़ी को कूक दे रहे हैं और वह यही उम्मीद करेगा कि घड़ी को कूक देने का जो नतीजा है वह ज़ाहिर होना चाहिए। लेकिन यह उम्मीद पूरी कैसे हो सकती है, जबकि वह घड़ी बस दूर से देखने ही की घड़ी है और हक़ीक़त में, उसके अन्दर घड़ीपन बाक़ी नहीं रहा है।

उम्मते मुस्लिमा का मक़सद

यह मिसाल जो मैंने आपके सामने बयान की है इससे आप सारा मामला समझ सकते हैं। इस्लाम को यही घड़ी मान लीजिए। जिस तरह घड़ी का मक़सद सही वक़्त बताना है, उसी तरह इस्लाम का मक़सद यह है कि ज़मीन में आप ख़ुदा के ख़लीफ़ा, लोगों पर ख़ुदा के गवाह और दुनिया में दावते हक़ के अलम्बरदार बनकर रहें, ख़ुद ख़ुदा के हुक्मों पर चलें और सबको ख़ुदा के क़ानून का ताबेदार बनाकर रखें। इस मक़सद को साफ़ तौर पर क़ुरआन में बयान कर दिया गया है—

كُنتُمْ خَيْرَ اُمَّةٍ اُخْرِجَتْ لِلنَّاسِ تَاْمُرُوْنَ بِالْمَعْرُوْفِ وَتَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَتُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ ○

तुम वह बेहतरीन उम्मत हो जिसे बनी आदम के लिए निकाला गया है। तुम्हारा काम यह है कि सब लोगों को नेकी का हुक्म दो और बुराई से रोको, और अल्लाह पर ईमान रखो।

(क़ुरआन, 3:110)

وَكَذٰلِكَ جَعَلْنٰكُمْ اُمَّةً وَّسَطًا لِّتَكُوْنُوْا شُهَدَآءَ عَلَى النَّاسِ ○

और इस तरह हमने तुमको बेहतरीन उम्मत बनाया है, ताकि तुम लोगों पर गवाह हो। (क़ुरआन, 2:143)

وَعَدَ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مِنْكُمْ وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ لَيَسْتَخْلِفَنَّهُمْ فِى الْاَرْضِ ○

अल्लाह ने वादा किया है उन लोगों से जो तुममें से ईमान लाएँ और नेक अमल करें कि वह ज़रूर उनको ज़मीन में अपना ख़लीफ़ा बनाएगा।

(क़ुरआन, 24:55)

इस्लामी हुक्म एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं जैसे घड़ी के पुर्ज़े

इस मक़सद को पूरा करने के लिए घड़ी के पुर्ज़ों की तरह इस्लाम में

भी वह तमाम पुर्ज़े इकट्ठा किए गए हैं जो इस ग़रज़ के लिए ज़रूरी और मुनासिब थे। दीन के अक़ीदे व अख़लाक़ के उसूल, मामलों के क़ायदे, ख़ुदा के हुक़ूक़, बन्दों के हुक़ूक़, ख़ुद अपने नफ़्स के हुक़ूक़, दुनिया की हर उस चीज़ के हुक़ूक़ जिससे आपका वास्ता पेश आता है, कमाने के क़ायदे और ख़र्च करने के तरीक़े, जंग के क़ानून और सुलह के क़ायदे, हुकूमत करने के क़ानून और इस्लामी हुकूमत की इताअत करने के ढंग, ये सब इस्लाम के पुर्ज़े हैं और उनको घड़ी के पुर्ज़ों की तरह एक ऐसी तरतीब से एक-दूसरे के साथ कसा गया है कि ज्यों ही उसमें कूक दी जाए, हर पुर्ज़ा दूसरे पुर्ज़ों के साथ मिलकर हरकत करने लगे और उन सबकी हरकत से असल नतीजा यानी इस्लाम का ग़लबा और दुनिया पर ख़ुदाई क़ानून की बालातरी इस तरह लगातार ज़ाहिर होना शुरू हो जाए जिस तरह कि आप एक घड़ी को देखते हैं कि उसके पुर्ज़ों की हरकत के साथ ही बाहर के सफ़ेद तख़्ते पर नतीजा बराबर ज़ाहिर होता चला जाता है। घड़ी में पुर्ज़ों को एक-दूसरे के साथ बाँधे रखने के लिए कुछ कीलें और पत्तियाँ लगाई गई हैं। इसी तरह इस्लाम के तमाम पुर्ज़ों को एक-दूसरे के साथ जुड़ा रखने और उनकी सही तरतीब क़ायम रखने के लिए वह चीज़ रखी गई है जिसको निज़ामे जमाअत कहा जाता है। यानी मुसलमानों का एक ऐसा सरदार जो दीन का सही इल्म और तक़्वे और परहेज़गारी की सिफ़त रखता हो। जमाअत के दिमाग़ मिलकर उसकी मदद करें। जमाअत के हाथ-पाँव उसके कहने पर चलें। इन सबकी ताक़त से वह इस्लाम के क़ानूनों को लागू करे और लोगों को उनके ख़िलाफ़ चलने से रोके। इस तरीक़े से जब सारे पुर्ज़े एक-दूसरे से जुड़ जाएँ और उनकी तरतीब ठीक-ठीक क़ायम हो जाए तो उनको हरकत देने और देते रहने के लिए कूक की ज़रूरत होती है और वही कूक यह नमाज़ है जो हर रोज़ पाँच वक़्त पढ़ी जाती है। फिर इस घड़ी को साफ़ करते रहने की भी ज़रूरत होती है और वह सफ़ाई ये रोज़े हैं जो साल-भर में तीस दिन रखे जाते हैं और उस घड़ी को तेल देते रहने की भी ज़रूरत है, तो ज़कात वह तेल है जो साल-भर में एक बार उसके पुर्ज़ों को दिया जाता है। यह तेल कहीं बाहर से नहीं आता, बल्कि इसी घड़ी के कुछ पुर्ज़े तेल भी बनाते हैं और कुछ सूखे हुए पुर्ज़ों को रोग़नदार करके आसानी के साथ चलने के क़ाबिल बना देते

हैं। फिर इसे कभी-कभी ओवर हालिंग (Over Hauling) करने की भी ज़रूरत होती है, सो वह ओवर हालिंग हज है जो उम्र में एक बार करना ज़रूरी है और इससे ज़्यादा जितना किया जा सके, उतना ही अच्छा है।

तितर-बितर पुर्ज़ों का जोड़ लाभदायक नहीं

अब आप ग़ौर कीजिए कि यह कूक देना, सफ़ाई करना, तेल देना और ओवर हाल करना उसी वक़्त फ़ायदेमंद हो सकता है जब फ्रेम में उसी घड़ी के सारे पुर्ज़े मौजूद हों। एक-दूसरे के साथ उसी तरतीब से जुड़े हुए हों जिस तरतीब से घड़ीसाज़ ने उन्हें जोड़ा था और ऐसे तैयार रहें कि कूक देते ही अपनी मुक़र्ररा हरकत करने लगें और हरकत करते ही नतीजा दिखाने लगें। लेकिन यहाँ मामला ही कुछ दूसरा हो गया है। एक तो जमाअत का वह निज़ाम ही बाक़ी नहीं रहा जिससे इस घड़ी के पुर्ज़ों को बाँधा गया था। नतीजा यह हुआ कि सारे पेंच ढीले पड़ गए और पुर्ज़ा-पुर्ज़ा अलग होकर बिखर गया। अब जो, जिसके जी में आता है करता है; कोई पूछनेवाला ही नहीं। हर आदमी आज़ाद है, उसका दिल चाहे तो इस्लाम के क़ानूनों की पैरवी करे और न चाहे तो न करे। इसपर भी आप लोगों का दिल ठण्डा न हुआ तो आपने इस घड़ी के बहुत-से पुर्ज़े निकाल डाले और उसकी जगह पर हर शख़्स ने अपनी-अपनी पसन्द के मुताबिक़ जिस दूसरी मशीन का पुर्ज़ा चाहा उसमें लाकर फिट कर दिया। कोई साहब सिलाई मशीन का पुर्ज़ा पसन्द करके ले आए, किसी साहब को आटा पीसने की चक्की का कोई पुर्ज़ा पसन्द आ गया तो वह उसे उठा लाए और किसी साहब को मोटर (लारी) की कोई चीज़ पसन्द आई तो उसे लाकर उस घड़ी में लगा दिया। अब आप मुसलमान भी हैं और बैंक से सूदी करोबार भी चल रहा है, इन्शोरेन्स कम्पनी में बीमा भी करा रखा है, ग़ैरशरई अदालतों में झूठे मुक़दमें भी लड़ रहे हैं, बातिल और बातिलपरस्तों की वफ़ादाराना ख़िदमत भी हो रही है। बेटियों, बहनों और बीवियों को मेम साहब भी बनाया जा रहा है बच्चों को माद्दापरस्ताना (भौतिकता पर आधारित) तालीम भी दी जा रही है, नेताओं की अन्धी पैरवी भी हो रही है और लेनिन के राग भी गाए जा रहे हैं। ग़रज़ यह कि कोई ग़ैर इस्लामी चीज़ ऐसी नहीं जिसे हमारे मुसलमान भाइयों ने ला-लाकर इस्लाम की इस घड़ी के

फ़्रेम में ठूँस न दिया हो। ज़माने की चलती हुई हर तहरीक को लपककर क़बूल कर लिया जाता है और इस्लाम में उसका पैवन्द लगाया जाता है।

पुर्ज़ों की दुरुस्ती के बग़ैर मतलब नतीजे नहीं

ये सब हरकतें करने के बाद आप चाहते हैं कि कूक देने से यह घड़ी चले और वही नतीजा दिखाए, जिसके लिए इस घड़ी को बनाया गया था और सफ़ाई करने, तेल देने और ओवर-हाल करने के वही फ़ायदे हों जो इन कामों के लिए मुक़र्रर हैं। मगर ज़रा अक़्ल से आप काम लें तो आसानी से आप समझ सकते हैं कि जो हाल आपने इस घड़ी का कर दिया है, उसमें तो ज़िन्दगी भर कूक देने और सफ़ाई करने और तेल देते रहने से भी कुछ नतीजा नहीं निकल सकता, जबतक कि आप बाहर से आए हुए सारे पुर्ज़ों को निकालकर उसके असली पुर्ज़े उसमें न रखेंगे और फिर इन पुर्ज़ों को उसी तरतीब के साथ जोड़कर कस न देंगे, जिस तरह शुरू में उन्हें जोड़ा और कसा गया था, आप हरगिज़ उन नतीजों की उम्मीद नहीं कर सकते जो इससे कभी ज़ाहिर हुए थे।

इबादत बेअसर होने की असल वजह

ख़ूब समझ लीजिए कि यही असली वजह है आपकी नमाज़ों और रोज़ों और ज़कात और हज के बे-नतीजा हो जाने की। एक तो आपमें से नमाज़ें पढ़नेवाले, रोज़े रखनेवाले, ज़कात और हज अदा करनेवाले हैं ही कितने? जमाअत का निज़ाम बिखर जाने से हर आदमी बिलकुल आज़ाद हो गया है, चाहे इन फ़र्ज़ों को अदा करे या न करे, कोई पूछनेवाला ही नहीं। फिर जो लोग इन्हें अदा करते हैं वे भी किस तरह अदा करते हैं? नमाज़ में जमाअत की पाबन्दी नहीं और अगर कहीं जमाअत की पाबन्दी है भी तो मसजिदों की इमामत के लिए उन लोगों को चुना जाता है जो दुनिया में किसी और काम के क़ाबिल नहीं होते। आप नाअह्ल लोगों को उस नमाज़ का इमाम बनाते हैं जो आपको ख़ुदा का ख़लीफ़ा और दुनिया में ख़ुदाई फ़ौजदार बनाने के लिए मुक़र्रर की गई थी। इसी तरह रोज़े, ज़कात और हज का जो हाल है वह भी बयान करने के क़ाबिल नहीं। इन सब बातों

के होते हुए भी आप कह सकते हैं कि अब भी बहुत-से मुसलमान अपने दीनी फ़र्ज़ों को पूरा करनेवाले ज़रूर हैं, लेकिन जैसा कि मैं बयान कर चुका हूँ कि घड़ी का पुर्ज़ा-पुर्ज़ा अलग करके और उसमें बाहर की बीसियों चीज़ें दाख़िल करके आपका कूक देना और न देना, सफ़ाई करना और न करना, तेल देना और न देना दोनों बे-नतीजा हैं। आपकी यह घड़ी दूर से घड़ी ही नज़र आती है। देखनेवाला यही कहता है कि यह इस्लाम है और आप मुसलमान हैं। आप जब इस घड़ी को कूक देते और सफ़ाई करते हैं तो दूर से देखनेवाला यही समझता है कि सचमुच आप कूक दे रहे हैं और सफ़ाई कर रहे हैं। कोई यह नहीं कह सकता कि यह नमाज़, नमाज़ नहीं है, या ये रोज़े, रोज़े नहीं हैं। मगर देखनेवालों को क्या ख़बर कि इस ज़ाहिरी फ़्रेम के अन्दर क्या कुछ कारस्तानियाँ की गई हैं!

हमारी अफ़सोसनाक हालत

मुसलमान भाइयो! मैंने आपको असली वजह बता दी है कि आपके यह मज़हबी आमाल आज क्यों बे-नतीजा हो रहे हैं? और क्या वजह है कि नमाज़ें पढ़ने और रोज़े रखने के बाद भी आप ख़ुदाई फ़ौजदार बनने के बजाए बातिल से मग़लूब और हर ज़ालिम का निशाना बने हुए हैं। लेकिन अगर आप बुरा न मानें तो मैं आपको इससे भी ज़्यादा अफ़सोसनाक बात बताऊँ। आपको अपनी इस हालत का रंज और अपनी मुसीबत का एहसास तो ज़रूर है, मगर आपके अन्दर हज़ार में से नौ सौ निन्यानवे, बल्कि इससे भी ज़्यादा लोग ऐसे हैं जो इस हालत को बदलने की सही सूरत के लिए राज़ी नहीं हैं! वे इस्लाम की इस घड़ी को जिसका पुर्ज़ा-पुर्ज़ा अन्दर से अलग कर दिया गया है और जिसमें अपनी-अपनी पसन्द के मुताबिक हर शख़्स ने कोई न कोई चीज़ मिला रखी है, फिर से तरतीब देना बरदाश्त नहीं कर सकते। क्योंकि जब उसमें से बाहरी चीज़ें निकाली जाएँगी तो लाज़िमी तौर पर हर एक की पसन्द की चीज़ निकाली जाएगी। यह नहीं हो सकता कि दूसरों की पसन्द की चीज़ें तो निकाल दी जाएँ, मगर आपने ख़ुद बाहर का जो पुर्ज़ा लाकर लगा रखा हो उसे रहने दिया जाए। इसी तरह जब उसे कसा जाएगा तो सब ही उसके साथ कसे जाएँगे। यह मुमकिन नहीं है कि और सब तो कस दिए जाएँ, मगर सिर्फ़ एक आप

ही ऐसे पुर्ज़े हों जिसे ढीला छोड़ दिया जाए। बस यही वह चीज़ है जब उसको कसा जाएगा तो वे ख़ुद भी उसके साथ कसे जाएँगे, और यह ऐसी मशक़्क़त है जिसे ख़ुशी-ख़ुशी सह लेना लोगों के लिए बड़ा ही कठिन है। इसलिए वे बस यह चाहते हैं कि यह घड़ी इसी हाल में दीवार की शोभा बनी रहे और दूर से ला-लाकर लोगों को इसका दर्शन कराया जाए और उन्हें बताया जाए कि इस घड़ी में ऐसी और ऐसी करामातें छिपी हुई हैं। इससे बढ़कर जो लोग कुछ ज़्यादा इस घड़ी से मुहब्बत करते हैं, वे चाहते हैं कि इसी हालत में इसको ख़ूब दिल लगा-लगाकर कूक दी जाए और बड़ी मेहनत से इसकी सफ़ाई की जाए। मगर किसी हाल में भी इसके पुर्ज़ों को तरतीब देने, कसने और बाहरी पुर्ज़े निकाल फेंकने का इरादा तक न किया जाए।

काश! मैं आपकी हाँ में हाँ मिला सकता! मगर मैं क्या करूँ कि जो कुछ मैं जानता हूँ उसके ख़िलाफ़ नहीं कह सकता। मैं आपको यक़ीन दिलाता हूँ कि जिस हालत में आप इस वक़्त हैं, उसमें पाँच वक़्त की नामज़ों के साथ तहज्जुद, इशराक़ और चाश्त भी आप पढ़ने लगें और पाँच-पाँच घण्टे रोज़ाना क़ुरआन भी पढ़ें और रमज़ान शरीफ़ के अलावा ग्यारह महीनों में साढ़े पाँच महीनों के और रोज़े भी रख लिया करें तब भी कुछ हासिल न होगा। घड़ी के अन्दर उसके असली पुर्ज़े रखें हों और उन्हें कस दिया जाए, तब तो ज़रा-सी कूक भी उसको चला देगी। थोड़ा-सा साफ़ करना और ज़रा-सा तेल देना भी नतीजाबख़्श होगा, वरना ज़िन्दगी-भर कूक देते रहिए, घड़ी न चलती है, न चलेगी।

وَمَا عَلَيْنَا إِلَّا الْبَلَاغُ ○

और हमारा काम सिर्फ़ सही बात पहुँचा देना है। (क़ुरआन, 36:17)

रोज़ा

हर उम्मत पर रोज़ा फ़र्ज़ किया गया

मुसलमान भाइयो! दूसरी इबादत जो अल्लाह तआला ने आपपर फ़र्ज़ की है 'रोज़ा' है। रोज़ा से मुराद यह है कि सुबह से शाम तक आदमी खाने-पीने और मुबाशरत (सहवास) से परहेज़ करे। नमाज़ की तरह यह इबादत भी शुरू से सभी पैग़म्बरों की शरीअत में फ़र्ज़ रही है। पिछली जितनी उम्मतें गुज़री हैं, सब इसी तरह रोज़े रखती थीं जिस तरह उम्मते मुहम्मदी रखती है, अलबत्ता रोज़े के हुक्म और रोज़े की तादाद और रोज़े रखने की मुद्दत में शरीअतों के दरमियान फ़र्क़ रहा है। आज भी हम देखते हैं कि अकसर मज़हबों में रोज़ा किसी न किसी शक्ल में ज़रूर मौजूद है। यह बात अलग है कि लोगों ने अपनी तरफ़ से बहुत-सी बातें मिलाकर इसकी शक्ल बिगाड़ दी है। कुरआन मजीद में आया है—

يَاأَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا كُتِبَ عَلَيْكُمُ الصِّيَامُ كَمَا كُتِبَ عَلَى الَّذِينَ مِنْ قَبْلِكُمْ

यानी ऐ मुसलमानो! तुम्हारे ऊपर रोज़ा फ़र्ज़ किया गया है, जिस तरह तुमसे पहले की उम्मतों पर फ़र्ज़ किया गया था।

(कुरआन, 2:183)

इस आयत से मालूम होता है कि अल्लाह तआला की तरफ़ से जितनी शरीअतें आई हैं, वे कभी रोज़े की इबादत से ख़ाली नहीं रही हैं।

रोज़ा क्यों फ़र्ज़ किया गया?

ग़ौर कीजिए कि आख़िर रोज़े में क्या बात है जिसकी वजह से अल्लाह तआला ने इस इबादत को हर ज़माने में फ़र्ज़ किया है।

ज़िन्दगी का मक़सद — रब की बन्दगी

इससे पहले कई बार आपसे बयान कर चुका हूँ कि इस्लाम का असल

मक़सद इनसान की पूरी ज़िन्दगी को अल्लाह की इबादत बना देना है। इनसान 'अब्द' यानी बन्दा पैदा हुआ है और 'अबदियत' यानी बन्दगी उसकी फ़ितरत में दाख़िल है। इसी लिए इबादत, यानी ख़याल व अमल में अल्लाह की बन्दगी, करने से कभी एक क्षण के लिए भी उसको आज़ाद न होना चाहिए। उसे अपनी ज़िन्दगी के हर मामले में हमेशा और हर वक़्त यह देखना चाहिए कि अल्लाह तआला की रज़ा और ख़ुशनूदी किस चीज़ में है और उसका ग़ज़ब और नाराज़गी किस चीज़ में। फिर जिस तरफ़ अल्लाह की रज़ा हो, उधर जाना चाहिए और जिस तरफ़ उसका ग़ज़ब और उसकी नाराज़ी हो, उससे इस तरह बचना चाहिए जैसे आग के अंगारे से कोई बचता है। जो तरीक़ा अल्लाह ने पसन्द किया हो, उसपर चलना चाहिए और जिस तरीक़े को उसने पसन्द न किया हो, उससे भागना चाहिए। जब इनसान की सारी ज़िन्दगी इस रंग में रंग जाए, तब समझो कि उसने अपने मालिक की बन्दगी का हक़ अदा किया और—

وَمَا خَلَقْتُ الْجِنَّ وَالْإِنْسَ إِلَّا لِيَعْبُدُوْنِ○

मैने जिन्नों और इनसानों को पैदा इसी लिए किया है कि वे मेरी बन्दगी करें

—का मंशा पूरा हो गया।

इबादत — बन्दगी की तरबियत

यह बात भी इससे पहले मैं बयान कर चुका हूँ कि नमाज़, रोज़ा, हज और ज़कात के नाम से जो इबादतें हम पर फ़र्ज़ की गई हैं उनका अस्ल मक़सद इसी बड़ी इबादत के लिए हमको तैयार करना है। उनको फ़र्ज़ करने का मतलब यह नहीं है कि अगर आपने दिन में पाँच वक़्त रुकू और सजदा कर लिया और रमज़ान में तीस दिन तक सुबह से शाम तक भूख-प्यास बरदाश्त कर ली और मालदार होने की सूरत में सालाना ज़कात और ज़िन्दगी में एक बार हज अदा कर लिया तो अल्लाह का जो कुछ हक़ आपपर था, वह अदा हो गया और इसके बाद आप उसकी बन्दगी से आज़ाद हो गए कि जो चाहें करते फिरें, बल्कि असल में इन इबादतों को फ़र्ज़

करने का मक़सद यही है कि उनके ज़रिए से आदमी की तरबियत की जाए और उसको इस क़ाबिल बना दिया जाए कि उसकी पूरी ज़िन्दगी अल्लाह की इबादत बन जाए। आइए! अब इसी मक़सद को सामने रखकर हम देखें कि रोज़ा किस तरह आदमी को उस बड़ी इबादत के लिए तैयार करता है।

रोज़ा मुकम्मल इबादत है

रोज़े के सिवा दूसरी जितनी इबादतें हैं, वे किसी न किसी तरह ज़ाहिरी हरकत से अदा की जाती हैं। मिसाल के तौर पर नमाज़ में आदमी उठता और बैठता है और रुकू और सिजदा करता है, जिसको हर शख़्स देख सकता है। हज में वह एक लम्बा सफ़र करके जाता है और फिर हज़ारों और लाखों आदमियों के साथ सफ़र करता है। ज़कात भी कम-से-कम एक आदमी देता है और दूसरा आदमी लेता है। इन सब इबादतों का हाल छिप नहीं सकता। अगर आप अदा करते हैं तब भी दूसरों को मालूम हो जाता है, अगर अदा नहीं करते तब भी लोगों को ख़बर हो ही जाती है। इसके बरख़िलाफ़ रोज़ा ऐसी इबादत है जिसका हाल ख़ुदा और बन्दे के सिवा किसी दूसरे पर नहीं खुल सकता। एक शख़्स सबके सामने सहरी खाए और इफ़तार के वक़्त तक ज़ाहिर में कुछ न खाए-पिए मगर छिपकर पानी पी जाए या कुछ चोरी-छिपे खा-पी ले तो ख़ुदा के सिवा किसी को भी इसकी ख़बर नहीं हो सकती। सारी दुनिया यही समझती रहेगी कि वह रोज़े से है और वह हक़ीक़त में रोज़े से न होगा।

रोज़ा — ईमान की मज़बूती की अलामत

रोज़े की इस हैसियत को सामने रखिए, फिर ग़ौर कीजिए कि जो आदमी हक़ीक़त में रोज़े रखता है और उसमें चोरी-छिपे भी कुछ नहीं खाता-पीता, सख़्त गर्मी की हालत में भी, जबकि प्यास से हलक़ चटखा जाता हो, पानी का एक क़तरा हलक़ से नीचे नहीं उतारता, सख़्त भूख की हालत में, जबकि आँखों में दम आ रहा हो, कोई चीज़ खाने का इरादा तक नहीं करता, उसे अल्लाह तआला के आलिमुलग़ैब (ग़ैब का जाननेवाला) होने

पर कितना ईमान है! किस क़द्र, ज़बरदस्त यक़ीन के साथ वह जानता है कि उसकी कोई हरकत चाहे सारी दुनिया से छिप जाए, मगर अल्लाह से नहीं छिप सकती! कैसा ख़ुदा का ख़ौफ़ उसके दिल में है कि बड़ी-से-बड़ी तकलीफ़ उठाता है, मगर सिर्फ़ अल्लाह के ख़ौफ़ की वजह से कोई ऐसा काम नहीं करता जो उसके रोज़े को तोड़नेवाला हो! कितना मज़बूत यक़ीन है उसको आख़िरत की जज़ा व सज़ा पर कि महीने भर में वह कम-से-कम तीन सौ साठ घण्टे के रोज़े रखता है और इस दौरान में कभी एक मिनट के लिए भी उसके दिल में आख़िरत के बारे में कोई शक का शायबा तक नहीं आता! अगर उसे इस बात में ज़रा-सा भी शक होता कि आख़िरत होगी या न होगी और उसमें अज़ाब व सवाब होगा या न होगा, तो वह कभी अपना रोज़ा पूरा नहीं कर सकता था। शक हो जाने के बाद यह मुमकिन नहीं है कि आदमी ख़ुदा के हुक्म को पूरा करने में कुछ न खाने और पीने के इरादे पर क़ायम रह जाए।

एक माह की लगातार ट्रेनिंग

इस तरह अल्लाह तआला हर साल पूरे एक महीने तक मुसलमान के ईमान को लगातार आज़माइश में डालता है और इस आज़माइश में जितना-जितना आदमी पूरा उतरता जाता है, उतना ही उसका ईमान मज़बूत होता जाता है। यह गोया आज़माइश की आज़माइश है और ट्रेनिंग की ट्रेनिंग। आप जब किसी आदमी के पास अमानत रखवाते हैं तो गोया उसकी ईमानदारी की आज़माइश करते हैं। अगर वह इस आज़माइश में पूरा उतरे और अमानत में ख़ियानत न करे तो उसके अन्दर अमानतों का बोझ सँभालने की और ज़्यादा ताक़त पैदा हो जाती है और वह ज़्यादा अमीन बनता चला जाता है। इसी तरह अल्लाह तआला भी लगातार एक महीने तक रोज़ाना बारह-बारह, चौदह-चौदह घण्टों तक आपके ईमान को कड़ी आज़माइश में डालता है और जब इस आज़माइश में आप पूरे उतरते हैं तो आपके अन्दर इस बात की और ज़्यादा क़ाबिलियत पैदा होने लगती है कि अल्लाह से डरकर दूसरे गुनाहों से भी परहेज़ करें। अल्लाह को आलिमुलग़ैब (ग़ैब का जाननेवाला) जानकर चोरी-छिपे भी उसके क़ानून को तोड़ने से बचें और हर मौक़े पर क़ियामत का वह दिन आपको याद आ जाया करे, जब

सब कुछ खुल जाएगा और बिना किसी रू-रियायत के भलाई का भला और बुराई का बुरा बदला मिलेगा। यही मतलब है इस आयत का—

يَاَيُّهَا الَّذِيْنَ آمَنُوْا كُتِبَ عَلَيْكُمُ الصِّيَامُ كَمَا كُتِبَ عَلَى الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ ۝

> ऐ ईमानवालो! तुम्हारे ऊपर रोज़े फ़र्ज़ किए गए हैं जिस तरह तुमसे पहले लोगों पर फ़र्ज़ किए गए थे, शायद कि तुम परहेज़गार बन जाओ। (क़ुरआन, 2:183)

इताअत की लम्बी मश्क़

रोज़े की एक दूसरी ख़ूबी भी है, और वह यह है कि यह एक लम्बी मुद्दत तक शरीअत के हुक्मों की लगातार इताअत कराता है। नमाज़ की मुद्दत एक वक़्त में कुछ मिनट से ज़्यादा नहीं होती। ज़कात देने का वक़्त साल भर में सिर्फ़ एक बार आता है। हज में अलबत्ता लम्बी मुद्दत लगती है, मगर इसका मौक़ा ज़िन्दगी भर में एक बार आता है और वह भी सबके लिए नहीं। इन सबके बरख़िलाफ़ रोज़ा हर साल पूरे एक महीने तक दिन-रात शरीअते मुहम्मदी की पैरवी की मश्क़ कराता है। सुबह सहरी के लिए उठो, ठीक फ़लाँ वक़्त पर खाना-पीना सब बन्द कर दो। दिन भर फ़लाँ-फलाँ काम कर सकते हो और फ़लाँ-फ़लाँ नहीं कर सकते। शाम को ठीक फ़लाँ वक़्त पर इफ़तार करो, फिर खाना खाकर आराम कर लो, फिर तरावीह के लिए दौड़ो। इस तरह हर साल, पूरे महीने भर, सुबह से शाम तक और शाम से सुबह तक मुसलमान को लगातार फ़ौजी सिपाहियों की तरह पूरे क़ायदे और क़ानून में बाँधकर रखा जाता है और फिर ग्यारह महीने के लिए उसे छोड़ दिया जाता है, ताकि जो तरबियत इस एक महीने में उसने हासिल की है, उसके असरात ज़ाहिर हों और जो कमी पाई जाए वह फिर दूसरे साल की ट्रेनिंग में पूरी की जाए।

तरबियत के लिए साज़गार इजतिमाई माहौल

इस तरह की ट्रेनिंग के लिए एक-एक शख़्स को अलग-अलग लेकर

तैयार करना किसी तरह मुनासिब नहीं होगा। फ़ौज में भी आप देखते हैं कि एक-एक शख़्स को अलग-अलग परेड नहीं कराई जाती, बल्कि पूरी फ़ौज की फ़ौज एक साथ परेड करती है। सबको एक वक़्त एक बिगुल की आवाज़ पर उठना और एक बिगुल की आवाज़ पर काम करना होता है, ताकि उनमें जमाअत बनकर एक साथ काम करने की आदत हो और इसके साथ ही वे सब एक-दूसरे की ट्रेनिंग में मददगार भी हों, यानी एक शख़्स की ट्रेनिंग में जो कुछ कमी रह जाए उसकी कमी को दूसरा और दूसरे की कमी को तीसरा पूरा कर दे। इसी तरह इस्लाम में भी रमज़ान का महीना रोज़े की इबादत के लिए ख़ास किया गया और सारे मुसलमानों को हुक्म दिया गया है कि एक वक़्त में सबके सब मिलकर रोज़ा रखें। इस हुक्म ने इनफ़िरादी (व्यक्तिगत) इबादत को इजतिमाई (सामूहिक) इबादत बना दिया। जिस तरह एक की संख्या को लाख से गुणा करो तो लाख की ज़बरदस्त संख्या बन जाती है, उसी तरह एक आदमी के रोज़ा रखने से जो अख़लाक़ी और रूहानी फ़ायदे हो सकते हैं, लाखों करोड़ों आदमियों के मिलकर रोज़ा रखने से वे लाखों-करोड़ों गुना बढ़ जाते हैं। रमज़ान का महीना पूरी फ़िज़ा को नेकी और परहेज़गारी की रूह से भर देता है। पूरी क़ौम में गोया तक़वा की खेती हरी-भरी हो जाती है। हर शख़्स न सिर्फ़ ख़ुद गुनाहों से बचने की कोशिश करता है, बल्कि अगर उसमें कोई कमज़ोरी होती है तो उसके दूसरे बहुत-से भाई जो उसी की तरह रोज़ेदार हैं, उसके मददगार बन जाते हैं। हर आदमी को रोज़ा रखकर गुनाह करते हुए शर्म आती है और हर एक के दिल में ख़ुद ही यह ख़्वाहिश उभरती है कि कुछ भलाई के काम करे, किसी ग़रीब को खाना खिलाए, किसी नंगे को कपड़ा पहनाए, किसी दुखी की मदद करे, किसी जगह अगर कोई नेक काम हो रहा हो तो उसमें हिस्सा ले और अगर कहीं खुल्लम-खुल्ला बुराई हो रही है तो उसे रोके। नेकी और तक़वा का एक आम माहौल पैदा हो जाता है और भलाइयों के फूलने-फलने का मौसम आ जाता है, जिस तरह आप देखते हैं कि हर फ़सल अपना मौसम आने पर ख़ूब फलती-फूलती है और हर तरफ़ खेतों पर छाई हुई नज़र आती है। इसी लिए नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया—

كُلُّ عَمَلِ ابْنِ آدَمَ يُضَاعَفُ الْحَسَنَةُ بِعَشْرِ اَمْثَالِهَا إِلٰى سَبْعِ مِأَةِ ضِعْفٍ

قَالَ اللّٰهُ تَعَالٰی إِلاَّ الصَّوْمُ فَإِنَّهٗ لِیْ وَاَنَا اَجْزِیْ بِهٖ.

आदमी का हर अमल ख़ुदा के यहाँ कुछ न कुछ बढ़ता है। एक नेकी दस गुनी से सात सौ गुनी तक फलती-फूलती है, मगर अल्लाह तआला फ़रमाता है कि रोज़ा इससे अलग है। वह ख़ास मेरे लिए है और मैं उसका जितना चाहता हूँ, बदला देता हूँ। —हदीस

इस हदीस से मालूम हुआ कि नेकी करनेवाले की नीयत और नेकी के नतीजों के लिहाज़ से सारे आमाल फलते-फूलते हैं और उनकी तरक़्क़ी के लिए एक हद मुक़र्रर है, लेकिन रोज़े की तरक़्क़ी के लिए कोई हद मुक़र्रर नहीं। रमज़ान चूँकि नेकी और भलाई के फलने-फूलने का मौसम है और इस मौसम में एक शख़्स नहीं, बल्कि लाखों करोड़ों मुसलमान मिलकर इस नेकी के बाग़ को पानी देते हैं, इसलिए यह बेहद व बेहिसाब बढ़ सकता है। जितनी ज़्यादा नेक नीयती के साथ इस महीने में अमल करेंगे, जिस क़द्र ज़्यादा बरकतों से ख़ुद फ़ायदा उठाएँगे और अपने दूसरे भाइयों को फ़ायदा पहुँचाएँगे और फिर जिस क़द्र ज़्यादा इस महीने के असरात बाद के ग्यारह महीनों में बाक़ी रखेंगे, उतना ही यह फूले-फलेगा और इसके फूलने-फलने की कोई हद नहीं है। आप ख़ुद अपने अमल से इसको महदूद कर लो तो यह आपका अपना क़ुसूर है।

इबादत के नतीजे अब कहाँ हैं?

रोज़े के यह असरात और यह नतीजे सुनकर आपमें से हर आदमी के दिल में यह सवाल पैदा होगा कि यह असरात आज कहाँ हैं? हम रोज़े भी रखते हैं और नमाज़ें भी पढ़ते हैं, मगर ये नतीजे जो तुम बयान करते हो, ज़ाहिर नहीं होते। इसकी एक वजह तो मैं आपसे पहले बयान कर चुका हूँ और वह यह है कि इस्लाम के अजज़ा (अंगों) को अलग-अलग कर देने के बाद और बहुत-सी नई चीज़ें इसमें मिला देने के बाद आप उन नतीजों की उम्मीद नहीं कर सकते जो पूरे निज़ाम की बँधी हुई सूरत ही में ज़ाहिर हो सकते हैं। इसके अलावा दूसरी वजह यह है कि इबादतों के बारे में आपके सोचने का ढंग बिलकुल बदल गया है। अब आप यह

समझने लगे हैं कि सिर्फ़ सुबह से शाम तक कुछ न खाने-पीने का नाम इबादत है और जब यह काम आपने कर लिया तो इबादत पूरी हो गई। इसी तरह दूसरी इबादतों की भी महज़ ज़ाहिरी शक्ल को आप इबादत समझते हैं और इबादत की असली रूह जो आपके हर अमल में होनी चाहिए, उससे आम तौर पर आपके 99 फ़ीसद बल्कि इससे भी ज़्यादा आदमी ग़ाफ़िल हैं। इसी वजह से ये इबादतें अपने पूरे फ़ायदे नहीं दिखातीं; क्योंकि इस्लाम में तो नीयत और फ़हम और समझ-बूझ ही पर सब कुछ मुनहसिर है।

अगर अल्लाह ने चाहा तो अगले ख़ुतबे में इस मज़मून की पूरी तशरीह करूँगा।

रोज़े का असल मक़सद

हर काम का एक मक़सद

मुसलमान भाइयो! हर काम जो इनसान करता है, उसमें दो चीज़ें ज़रूर ही हुआ करती हैं। एक चीज़ तो वह मक़सद है जिसके लिए काम किया जाता है और दूसरी चीज उस काम की वह ख़ास शक्ल है जो इस मक़सद को हासिल करने के लिए इख़तियार की जाती है। मिसाल के तौर पर खाना खाने के काम को लीजिए। खाने से आपका मक़सद ज़िन्दा रहना और जिस्म की ताक़त को बहाल रखना है। इस मक़सद को हासिल करने की सूरत यह है कि आप निवाले बनाते हैं, मुँह में ले जाते हैं, दाँतों से चबाते हैं और हलक़ से नीचे उतारते हैं। चूँकि इस मक़सद को हासिल करने के लिए सबसे ज़्यादा फ़ायदेमन्द और सबसे बेहतरीन तरीक़ा यही हो सकता था, इसलिए आपने इसी को इख़तियार किया। लेकिन आपमें से हर शख़्स जानता है कि असल चीज़ वह मक़सद है जिसके लिए खाना खाया जाता है, न कि खाने के काम की यह शक्ल। अगर कोई शख़्स लकड़ी का बुरादा या राख या मिट्टी लेकर उसके निवाले बनाए और मुँह में ले जाए और दाँतों से चबाकर हलक़ से नीचे उतार ले तो आप उसे क्या कहेंगे? यही ना कि उसका दिमाग़ ख़राब है। क्यों? इसलिए कि वह खाने के असल मक़सद को नहीं समझता और इस ग़लतफ़हमी में मुब्तला है कि बस खाने के काम की इन चार ज़ाहिरी बातों को अदा कर देने ही का नाम खाना खाना है। इसी तरह आप उस शख़्स को भी पागल ठहराएँगे जो रोटी खाने के बाद फ़ौरन ही हलक़ में उँगली डालकर क़ै कर देता हो और फिर शिकायत करता हो कि रोटी खाने के जो फ़ायदे बयान किए जाते हैं, वे मुझे हासिल ही नहीं होते, बल्कि मैं तो उल्टा रोज़ बरोज़ दुबला होता जा रहा हूँ और मर जाने की नौबत आ गई है। यह मूर्ख अपनी इस कमज़ोरी का इलज़ाम रोटी और खाने पर रखता है, हालाँकि बेवकूफ़ी उसकी अपनी है। उसने अपनी नादानी से यह समझ लिया कि खाने के काम में ये जो कुछ ज़ाहिरी

बातें हैं, बस इन्हीं को अदा कर देने से ज़िन्दगी की ताक़त हासिल हो जाती है। इसलिए उसने सोचा कि अब रोटी का बोझ अपने मेदे में क्यों रखे? क्यों न इसे निकाल फेंका जाए ताकि पेट हल्का हो जाए, खाने के काम की ज़ाहिरी सूरत तो मैं अदा ही कर चुका हूँ। यह बेवकूफ़ी का ख़याल जो उसने क़ायम किया और फिर उसकी पैरवी की, इसकी सज़ा भी तो आख़िर उसी को भुगतना चाहिए। उसको जानना चाहिए था कि जब तक रोटी पेट में जाकर हज़म न हो और ख़ून बनकर सारे बदन में फैल न जाए, उस वक़्त तक ज़िन्दगी की ताक़त हासिल नहीं हो सकती। खाने के ज़ाहिरी काम भी यूँ तो ज़रूरी हैं, क्योंकि इनके बिना रोटी मेदे तक नहीं पहुँच सकती, मगर सिर्फ़ इन ज़ाहिरी कामों के अदा कर देने से काम नहीं चल सकता। इन कामों में कोई जादू भरा हुआ नहीं है कि उन्हें अदा करने से बस जादुई तरीक़े पर आदमी की रगों में ख़ून दौड़ने लगता हो। ख़ून पैदा करने के लिए अल्लाह ने जो क़ानून बनाया है उसी के मुताबिक़ वह पैदा होगा। उसको तोड़ोगे तो अपने आपको ख़ुद ही मौत के घाट उतारोगे।

ज़ाहिर को हक़ीक़त समझने के नतीजे

यह मिसाल जो इस तफ़सील के साथ मैंने आपके सामने बयान की है, इस पर आप ग़ौर करें तो आपकी समझ में आ सकता है कि आज आपकी इबादतें क्यों बेअसर हो गईं? जैसा कि मैं पहले भी आपसे बार-बार बयान कर चुका हूँ, सबसे बड़ी ग़लती यही है कि आपने नमाज़-रोज़ों के अरकान की ज़ाहिरी सूरतों ही को असल इबादत समझ रखा है और इस गुमान में फँस गए हैं कि जिसने ये अरकान पूरी तरह अदा कर दिए, उसने बस अल्लाह की इबादत कर दी। आपकी मिसाल उसी शख़्स की-सी है जो खाने के चारों अरकान यानी निवाले बनाना, मुँह में रखना, चबाना, हलक़ से नीचे उतार देना, बस इन्हीं चारों के मजमूए को खाना समझता है और यह ख़याल करता है कि जिसने ये चारों अरकान अदा कर दिए, उसने खाना खा लिया और खाने के फ़ायदे उसको हासिल होने चाहिएँ, भले ही उसने उन अरकान के साथ मिट्टी और पत्थर अपने पेट में उतारे हों, या रोटी खाकर फ़ौरन कै कर दी हो। अगर हक़ीक़त में आप लोग इस हिमाक़त में फँस नहीं गए हैं तो मुझे बताइए कि यह क्या माजरा है

कि जो रोज़ेदार सुबह से शाम तक अल्लाह की इबादत में मशग़ूल रहता है, वह ठीक इस इबादत की हालत में झूठ कैसे बोलता है? ग़ीबत किस तरह करता है? बात-बात पर लड़ता क्यों है? उसकी ज़बान से गालियाँ क्यों निकलती हैं? वह लोगों का हक़ कैसे मार खाता है? हराम खाने और हराम खिलाने का काम किस तरह कर लेता है और फिर यह सब काम करके भी अपने नज़दीक यह कैसे समझता है कि मैंने ख़ुदा की इबादत की है? क्या उसकी मिसाल उस आदमी की-सी नहीं है जो राख और मिट्टी खाता है और सिर्फ़ खाने के चार अरकान अदा कर देने को समझता है कि खाना इसी को कहते हैं!

रमज़ान के बाद फिर आज़ादी

फिर मुझे बताइए कि यह क्या माजरा है कि रमज़ान-भर में तक़रीबन 360 घण्टे ख़ुदा की इबादत करने के बाद जब आप फ़ारिग़ होते हैं तो इस पूरी इबादत के तमाम असरात शव्वाल की पहली तारीख़ ही को काफ़ूर हो जाते हैं? ग़ैर-मुसलिम अपने त्योहारों में जो कुछ करते हैं, वही सब आप ईद के ज़माने में करते हैं। हद यह है कि शहरों में तो ईद के दिन बदकारी और शराबनोशी और क़िमारबाज़ी (जुवा खेलना) तक होती है और कुछ ज़ालिम तो मैंने ऐसे भी देखे हैं जो रमज़ान के ज़माने में दिन में रोज़ा रखते हैं और रात को शराब पीते हैं। आम मुसलमान ख़ुदा के फ़ज़्ल से इतने बिगड़े हुए तो नहीं, मगर रमज़ान ख़त्म होने के बाद आपमें से कितने ऐसे हैं जिनके अन्दर ईद के दूसरे दिन भी तक़वा और परहेज़गारी का कोई असर बाक़ी रह जाता हो? ख़ुदा के क़ानूनों की ख़िलाफ़वर्ज़ी में कौन-सी कसर उठा रखी जाती है? नेक कामों में कितना हिस्सा लिया जाता है और नफ़्सानियत में क्या कमी आ जाती है?

इबादत की ग़लत सोच का नतीजा

सोचिए और ग़ौर कीजिए कि इसकी वजह आख़िर क्या है? मैं आपको यक़ीन दिलाता हूँ, इसकी वजह सिर्फ़ यह है कि आपके दिमाग़ में इबादत का मफ़हूम और मतलब ही ग़लत हो गया है। आप यह समझते हैं कि

सहर से लेकर मग़रिब तक कुछ न खाने-पीने का नाम रोज़ा है और बस यही इबादत है। इसी लिए रोज़े की तो आप पूरी हिफ़ाज़त करते हैं, ख़ुदा का ख़ौफ़ आपके दिल में इस क़द्र होता है कि जिस चीज़ में रोज़ा टूटने का ज़रा-सा भी अंदेशा हो उससे भी आप बचते हैं। अगर जान पर भी बन जाए तब भी रोज़ा तोड़ने में झिझक होती है। लेकिन आप यह नहीं जानते कि यह भूखा-प्यासा रहना असल इबादत नहीं, बल्कि इबादत की सूरत है और यह सूरत मुक़र्रर करने का मक़सद यह है कि आपके अन्दर ख़ुदा का ख़ौफ़ और ख़ुदा की मुहब्बत पैदा हो और आपके अन्दर इतनी ताक़त पैदा हो जाए कि जिस चीज़ में दुनियाभर के फ़ायदे हों, मगर ख़ुदा नाराज़ होता हो, उससे अपने नफ़्स पर जब्र करके बच सकें और जिस चीज़ में हर तरह के ख़तरे और नुक़सान हों, मगर ख़ुदा उससे ख़ुश होता हो, उसपर आप अपने नफ़्स को मजबूर करके तैयार कर सकें। यह ताक़त इसी तरह पैदा हो सकती थी कि आप रोज़े के मक़सद को समझते और महीने-भर तक अपने ख़ुदा के ख़ौफ़ और ख़ुदा की मुहब्बत में अपने नफ़्स को ख़्वाहिशों से रोकने और ख़ुदा की रज़ा के मुताबिक़ चलाने की जो मश्क़ की है, उससे काम लेते। मगर आप तो रमज़ान के बाद ही इस मश्क़ को और उन ख़ूबियों को, जो इस मश्क़ से पैदा होती हैं, इस तरह निकाल फेंकते हैं जैसे खाना खाने के बाद कोई शख़्स हलक़ में उँगली डालकर क़ै कर दे, बल्कि आपमें से कुछ लोग तो रोज़ा खोलने के बाद ही दिन भर की परहेज़गारी को उगल देते हैं। फिर आप ही बताइए कि रमज़ान और उसके रोज़े कोई जादू तो नहीं हैं कि बस उसकी ज़ाहिरी शक्ल पूरी कर देने से आपको वह ताक़त हासिल हो जाए जो हक़ीक़त में रोज़े से हासिल होनी चाहिए। जिस तरह रोटी से जिस्मानी ताक़त उस वक़्त तक नहीं हासिल हो सकती जब तक कि वह मेदे में जाकर हज़्म न हो और ख़ून बनकर जिस्म की रग-रग में न पहुँच जाए, उसी तरह रोज़े से भी रूहानी ताक़त उस वक़्त तक हासिल नहीं होती जब तक कि आदमी रोज़े के मक़सद को पूरी तरह समझे नहीं और अपने दिल व दिमाग़ के अन्दर उसको उतरने और ख़याल, नीयत, इरादे और अमल सब पर छा जाने का मौक़ा न दे।

रोज़ा परहेज़गार बनने का ज़रिया

यही वजह है कि अल्लाह तआला ने रोज़े का हुक्म देने के बाद फ़रमाया—

لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ○

शायद कि तुम मुत्तक़ी और परहेज़गार बन जाओ।

यह नहीं फ़रमाया कि इससे ज़रूर मुत्तक़ी और परहेज़गार बन जाओगे। इसलिए कि रोज़े का यह नतीजा तो आदमी की समझ-बूझ और उसके इरादे पर मौक़ूफ़ है। जो इसके मक़सद को समझेगा और उसके ज़रिए से असल मक़सद को हासिल करने की कोशिश करेगा, वह थोड़ा या बहुत मुत्तक़ी बन जाएगा। मगर जो मक़सद ही को न समझेगा और उसे हासिल करने की कोशिश ही न करेगा उसे कोई फ़ायदा हासिल होने की उम्मीद नहीं।

रोज़े का असल मक़सद

झूठ से बचना

नबी (सल्ल०) ने मुख़्तलिफ़ तरीक़ों से रोज़े के असल मक़सद की तरफ़ ध्यान दिलाया है और यह समझाया है कि मक़सद से ग़ाफ़िल होकर भूखा-प्यासा रहना कुछ मुफ़ीद नहीं। इसलिए फ़रमाया—

مَنْ لَّمْ يَدَعْ قَوْلَ الزُّوْرِ وَالْعَمَلَ بِهٖ فَلَيْسَ لِلّٰهِ حَاجَةٌ فِىْ اَنْ يَّدَعَ طَعَامَهٗ وَشَرَابَهٗ.

जिस किसी ने झूठ बोलना और झूठ पर अमल करना ही न छोड़ा तो उसका खाना और पानी छुड़ा देने की अल्लाह को कोई हाजत नहीं।

(हदीस)

दूसरी हदीस में है कि प्यारे नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया—

كَمْ مِّنْ صَائِمٍ لَيْسَ لَهٗ مِنْ صِيَامِهٖ اِلاَّ الظَّمَاءُ وَكَمْ مِّنْ قَائِمٍ

لَيْسَ لَهُ مِنْ قِيَامِهِ إِلاَّ السَّهَرُ.

बहुत-से रोज़ेदार ऐसे हैं कि रोज़े से भूख-प्यास के सिवा उनके पल्ले कुछ नहीं पड़ता और बहुत-से रातों के खड़े रहनेवाले ऐसे हैं कि इस क़ियाम से रतजगे के सिवा उनके पल्ले कुछ नहीं पड़ता। (हदीस)

इन दोनों हदीसों का मतलब बिलकुल साफ़ है। इनसे साफ़ तौर पर मालूम होता है कि सिर्फ़ भूखा और प्यासा रहना इबादत नहीं है, बल्कि असल इबादत का ज़रिया है और असल इबादत है ख़ुदा के ख़ौफ़ की वजह से ख़ुदा के क़ानून की ख़िलाफ़वर्ज़ी न करना और ख़ुदा की मुहब्बत की वजह से हर उस काम के लिए शौक़ से लपकना जिसमें महबूब की ख़ुशनूदी हो और जहाँ तक भी मुमकिन हो नफ़्सानियत से बचना। इस इबादत से जो शख़्स ग़ाफ़िल रहा उसने बेकार ही अपने पेट को भूख और प्यास की तकलीफ़ दी। अल्लाह तआला को इसकी ज़रूरत कब थी कि बारह-चौदह घण्टों के लिए उससे खाना-पीना छुड़ा देता।

ईमान व इहतिसाब

रोज़े के असल मक़सद की तरफ़ प्यारे नबी (सल्ल०) इस तरह तवज्जोह दिलाते हैं—

مَنْ صَامَ رَمَضَانَ اِيْمَانًا وَّاِحْتِسَابًا غُفِرَلَهٗ مَا تَقَدَّمَ مِنْ ذَنْبِهٖ .

यानी जिसने रोज़ा रखा, ईमान और इहतिसाब के साथ, उसके सारे पिछले गुनाह माफ़ कर दिए गए। (हदीस)

'ईमान' का मतलब यह है कि ख़ुदा के बारे में एक मुसलमान का जो अक़ीदा होना चाहिए, वह अक़ीदा दिमाग़ में पूरी तरह ताज़ा रहे और 'इहतिसाब' का मतलब यह है कि आदमी अल्लाह ही की रिज़ा का तालिब हो और हर वक़्त अपने ख़यालों और अपने कामों पर नज़र रखे कि कहीं वह अल्लाह की मरज़ी के ख़िलाफ़ तो नहीं चल रहा है। इन दोनों चीज़ों के साथ जो आदमी रमज़ान के पूरे रोज़े रख लेगा वह अपने पिछले गुनाह बख़्शवा ले जाएगा। इसलिए कि अगर वह कभी सरकश व नाफ़रमान बन्दा था भी

तो अब उसने अपने मालिक की तरफ़ पूरी तरह रुजू कर लिया, और

اَلتَّائِبُ مِنَ الذَّنْبِ كَمَنْ لاَ ذَنْبَ لَهُ.

गुनाह से तौबा करनेवाला ऐसा है जैसे उसने गुनाह किया ही न था। (हदीस)

गुनाहों से बचने की ढाल

दूसरी हदीस में आया है—

اَلصِّيَامُ جُنَّةٌ وَاِذَا كَانَ يَوْمَ صَوْمِ اَحَدِكُمْ فَلاَ يَرْفُثْ وَ لاَيَصْخَبْ فَاِنْ سَابَّهُ اَحَدٌ اَوْ قَاتَلَهُ فَلْيَقُلْ اِنِّيْ امْرَءٌ صَائِمٌ.

रोज़े ढाल की तरह हैं (कि जिस तरह ढाल दुशमन के वार से बचने के लिए है उसी तरह रोज़ा भी शैतान के वार से बचने के लिए है) इसलिए जब कोई शख़्स रोज़े से हो तो उसे चाहिए कि (इस ढाल को इस्तेमाल करे और) दंगे-फ़साद से परहेज़ करे। अगर कोई शख़्स उसको गाली दे या उससे लड़े तो उसको कह देना चाहिए कि भाई! मैं रोज़े से हूँ, (मुझसे यह उम्मीद न रखो कि तुम्हारे इस मशग़ले में हिस्सा लूँगा)।

नेकी की ख़्वाहिश

दूसरी हदीसों में हुज़ूर (सल्ल०) ने बताया है कि रोज़े की हालत में आदमी को ज़्यादा-से-ज़्यादा नेक काम करने चाहिएँ और हर भलाई का शौक़ीन बन जाना चाहिए। ख़ासकर इस हालत में उसके अन्दर अपने दूसरे भाइयों की हमदर्दी का जज़्बा तो पूरी शिद्दत के साथ पैदा हो जाना चाहिए, क्योंकि वह ख़ुद भूख-प्यास की तक़लीफ़ में मुब्तला होकर ज़्यादा अच्छी तरह महसूस कर सकता है कि ख़ुदा के दूसरे बन्दों पर ग़रीबी और मुसीबत में क्या गुज़रती होगी। हज़रत इब्न अब्बास (रज़ि०) की रिवायत है कि ख़ुद हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) रमज़ान में आम दिनों से ज़्यादा रहीम व शफ़ीक़ हो जाते थे। कोई माँगनेवाला उस ज़माने में हुज़ूर (सल्ल०) के दरवाज़े से ख़ाली न जाता था और कोई क़ैदी उस ज़माने में क़ैद न रहता

था।

इफ़तार कराने का सवाब

एक हदीस में आया है कि हुज़ूर (सल्ल०) ने फ़रमाया—

مَنْ فَطَّرَ فِيْهِ صَائِمًا كَانَ لَهُ مَغْفِرَةٌ لِّذُنُوْبِهٖ وَعِتْقُ رَقَبَتِهٖ مِنَ النَّارِ وَ كَانَ لَهُ مِثْلُ اَجْرِهٖ مِنْ غَيْرِ اَنْ يُّنْتَقَصَ مِنْ اَجْرِهٖ شَيْئٌ.

जिसने रमज़ान में किसी रोज़ेदार को इफ़तार कराया तो यह उसके गुनाहों की बख़शिश का और उसकी गरदन को आग से छुड़ाने का ज़रिया होगा और उसको उतना ही सवाब मिलेगा जितना उस रोज़ेदार को रोज़ा रखने का सवाब मिलेगा बग़ैर इसके कि रोज़ेदार के अज्र में कोई कमी हो।

